चन्दामामा
नवम्बर १९७०
75 P

चन्दामामा

नवम्बर १९७०

*

विषय - सूची

संपादकीय ... १
मांत्रिकों का टापू ... २
शिलारथ ... ९
संस्कार (बेताल कथा) ... १७
नागेन्द्र ... २२
योग्य राजा ... ३१
धूर्त बुढ़िया - ५ ... ३३
भूतों का बखेड़ा ... ४१
लाड़-प्यार ... ४५
महाभारत ... ४९
बसा का नाविक-३ ... ५७
संसार के आश्चर्य ... ६१
फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता ... ६४

*

एक प्रति ०-७५ पैसे

वार्षिक चन्दा रु. ९-००

दाँत निकलते समय
बच्चों के लिये
स्वास्थ्यप्रद पेय...

डाबर ग्राइप वाटर

दाँत निकलते समय आमतौर से बच्चे पेट सम्बन्धी अनेक रोगों से पीड़ित हो जाते हैं। डाबर ग्राइप वाटर पेट की तमाम तकलीफ़ों को दूर करने की एक परीक्षित दवा है। स्वादिष्ट होने के कारण बच्चे इसे बड़े प्रेम से पीते हैं। आज ही से आप भी अपने बच्चों को इस्तेमाल करायें।

डाबर (डा० एस० के० बर्म्मन) प्राइवेट लिमिटेड, कलकत्ता-२९

★

आप के सर्व प्रिय 'चन्दामामा' का दिसंबर '७० से नया आकर्षण

★

इस समय चन्दामामा की जो पार्श्व-सिलाई होती है, उसके बदले बीच की सिलाई होगी। इस परिवर्तन के परिणाम स्वरूप चन्दामामा पढ़ने में सुविधाजनक होगी और यह पत्रिका पहले की अपेक्षा और जल्दी आपके हाथों में पहुँच जायगी।

—प्रकाशक

★

लाइफ़बॉय
है जहाँ
तंदुरुस्ती
है वहाँ
LIFEBUOY
for health
लाइफ़बॉय
मैल में छिपे कीटाणुओं
को धो डालता है
लिंटास- L. 61-77 HI
हिन्दुस्तान लीवर का एक उत्कृष्ट उत्पादन

चन्दामामा

जो कि आप लोगों की लोकप्रिय पारिवारिक पत्रिका है, दिसंबर से मलयालम में भी प्रकाशित हो रही है–

अंबिलि अम्मावन

चित्र और कहानियाँ... भारत तथा विदेशों की लोककथाएँ आप उसमें पढ़ सकेंगे ।

संपर्क स्थापित करे:

डाल्टन एजेन्सीस

"चन्दामामा बिल्डिंग्स"

मद्रास - २६

चन्दामामा
संचालक: चक्रपाणी
इस अंक के साथ "शिला रथ" नामक एक सचित्र रंगीन धारावाही उपन्यास का प्रारंभ हो रहा है। इसमें पाठक नवीनता देखेंगे।
"संस्कार" नामक बेताल कथा हमें इस बात का परिचय देती है कि प्राणियों को उच्च दशा प्राप्त करने के लिए अन्य मार्ग नहीं हैं। "भूतों का बखेड़ा" नामक कहानी भी लगभग इसी नीति का बोध कराती है। पाप के फल से पिशाच का जन्म पाने पर उस जन्म से आसानी से मुक्ति नहीं मिलती।
वर्ष : २३ नवम्बर १९७० अंक : ३

माणिक्यों का टापू

पूर्वी समुद्र के तट पर एक गाँव में केशव नामक एक गरीब युवक था। उसने सोचा कि दूर देशों में जाकर धन कमावे और वह एक दिन एक व्यापारी जहाज में रवाना हुआ। कुछ दिन यात्रा आराम से चली, मगर एक दिन भयंकर तूफ़ान आया जिससे जहाज समुद्र में डूब गया। बाकी यात्रियों का तो कुछ पता न चला, लेकिन तूफ़ान की लहरों ने केशव को एक टापू के किनारे फेंक दिया।

उस टापू में कोई आदमी, पशु या पक्षी न था। जहाँ भी देखो, सब जगह नारियल के पेड़ थे। उनमें खूब नारियल लगे थे। केशव ने सोचा कि नारियल तोड़कर पेट भरने के सिवाय कोई मार्ग नहीं है। इसलिए वह पेड़ पर चढ़ा।

उस वक़्त उसने एक अद्भुत दृश्य देखा। एक बड़ा जंगली सुअर हवा में उड़ते उसी टापू की ओर आ रहा है। केशव खुद अपनी आँखों पर यक़ीन नही कर पाया। उस सुअर के पंख भी न थे। वह उड़ते आकर टापू में उतरा और धूप में लेटकर खुर्राटे लेते सो गया।

केशव ने पेड़ से उतर कर सुअर की जाँच की। वह मामूली सुअर जैसा ही था, मगर उसके मुँह में तेज दाढ़ें थीं। उस सुअर की बगल में एक बड़ा हीरा था। शायद उस हीरे को सुअर ही लाया।

केशव ने उस हीरे की जाँच की। उसने कभी उतना बड़ा हीरा न देखा था।

"इस टापू से निकल जाय तो मेरी गरीबी को दूर करने के लिए यह एक ही हीरा पर्याप्त है।" केशव ने मन में सोचा।

इतने में सुअर की खुर्राहट दूर हुई। लगा कि वह नींद से जाग रहा है।

जय नारायण तिवारी

"उफ़! यह सुअर मुझे मार डालेगा। पेड़ पर ही रह जाता तो क्या ही अच्छा होता।" केशव अपने मन में पछताने लगा। केशव अपने मन में यह बात सोच ही रहा था कि वह अचानक उड़ा और नारियल के पेड़ पर जा उतरा।

"इस हीरे की कोई महिमा है। लगता है कि इसे हाथ में लेकर जो संकल्प करें, उसकी पूर्ति हो जायगी। इसकी महिमा के कारण ही सुअर हवा में उड़ता आया।" केशव ने मन में सोचा।

इस बीच सुअर जाग उठा। वह पेड़ के नीचे आया और केशव की ओर गुर्राने लगा। केशव के हाथ में हीरा देख सुअर भयंकर रूप में गरज उठा।

केशव ने एक भारी नारियल तोड़ा और ज़ोर से सुअर के मुंह पर दे मारा। सुअर चोट खाकर बेहोश हो गया। मौक़ा पाकर केशव हीरे की मदद से नीचे उतर आया और भारी पत्थर लेकर सुअर के सर को फोड़ डाला। सुअर मर गया।

वह सुअर एक मांत्रिक था। उसे सुअर के रूप में हवा में उड़ने का शौक था। केशव ने अनजाने ही एक मांत्रिक को मारा और उसकी शक्तियोंवाले हीरे को पा गया। उस टापू में और मांत्रिक थे। मगर यह बात केशव बिल्कुल न जानता था।

केशव के हाथ ऐसा हीरा लगा जो सभी इच्छाओं की पूर्ति करनेवाला था। इसलिए उसका डर जाता रहा। उसके मन में सारा टापू घूमकर देखने की इच्छा पैदा हुई। वह हवा में उड़ते टापू के भीतर निकल पड़ा।

उड़ते वक़्त उसे दूर पर धुआं दिखाई दिया। उसने सोचा कि धुएँ के पास ज़रूर कोई न कोई आदमी होगा। उसको देखने केशव उसी दिशा में चल पड़ा।

एक जगह उसे एक झोंपड़ी दिखाई दी। झोंपड़ी के आगे एक लंगड़ा बैठे आग में बकरी को जला रहा था।

केशव ने उस लंगड़े के पास जाकर पूछा—"सुनो भाई, मैं भूखा हूँ। थोड़ा-सा खाना और रात को सोने की जगह दोगे?"

"यही हम दोनों खा लेंगे।" लंगड़े ने बकरी का थोड़ा हिस्सा केशव को दे दिया।

मगर लंगड़ा केशव की ओर इस तरह घूरकर देख रहा था, मानों उसे भी जलाकर खानेवाले हो! केशव उसकी दृष्टि में क्रूरता देख एकदम सहम गया।

खाने के बाद लंगड़े ने केशव से पूछा—"तुम यहाँ पर कैसे आये?"

केशव ने अपनी सारी कहानी सुनाकर उसे वह हीरा दिखाया।

"मैं लंगड़ा हूँ। चल-फिर नहीं सकता। यदि तुम मुझे वह हीरा दोगे, तो मैं बदले में एक अद्भुत कुल्हाड़ी दूँगा। तुम इसकी मूठ पर मारकर 'आग जलाओ' कहोगे तो वह लकड़ियाँ लाकर आग जला देगी, यदि उसके सर पर मारकर 'सर काट दो' कहोगे तो वह सामनेवाले का सर काट देगी।" लंगड़े मांत्रिक ने समझाया।

"अच्छी बात है! मैं अपने हीरे को बदलने के लिए तैयार हूँ।" यह कहकर केशव ने एक हाथ से हीरा देकर दूसरे हाथ से लंगड़े की कुल्हाड़ी ली और तुरंत कुल्हाड़ी के सर पर मारकर कहा—"इस लंगड़े का सर काट दो।" दूसरे क्षण कुल्हाड़ी ने लंगड़े का सर काट दिया।

केशव सावधान हो गया। वरना वह लंगड़ा मांत्रिक उस हीरे की मदद से केशव को आग में जला डालता।

एक और मांत्रिक को भी मारकर केशव ने हीरे के साथ कुल्हाड़ी भी पा ली

और सूर्यास्त होने तक वह एक दूसरी झोंपड़ी के पास जा पहुँचा। उस झोंपड़ी के सामने एक आदमी बैठा था। उसके हाथ कटे हुए थे। उसकी बगल में एक छोटा-सा चबूतरा और उस पर एक मिट्टी का बर्तन था।

हथकटे ने केशव को अपनी ओर आते देख घबराये हुए अपनी दाढ़ी से बर्तन को लुढ़का दिया। बर्तन के दूध एक महा प्रवाह की भांति बहने लगे। धीरे-धीरे वह एक बाढ़-सी हो गयी और झोंपड़ी के चारों तरफ़ सारा दूध फैल गया। केशव यों तो उस प्रवाह में बह जाता। लेकिन हीरे की मदद से वह हवा में उड़ा और हथकटे की बगल में जा उतरा।

हथकटे ने अचरज में आकर पूछा–"अरे भाई, यह कैसी हुनर है?"

केशव ने उसे अपने हाथ का हीरा दिखाते हुए कहा–"तुम जो भी चाहो, यह हीरा ला देगा।"

"तुम मेरा यह बर्तन लेकर वह हीरा मुझे दे दो। यह मंत्रवाला बर्तन तुम जो भी खाना मांगो, दे देगा। इसे तुम औंधे मुंह कर दोगे तो कई देशों को तुम एक साथ बहा सकते हो।" हथकटे ने समझाया।

केशव ने अपना हीरा हथकटे को दिया और बर्तन को हाथ में ले कुल्हाड़ी के सर पर मार कर कहा–"इसका सर काट दो।" दूसरे ही क्षण में हथकटे का सर कट कर गिर गया।

केशव को अब हीरे व कुल्हाड़ी के साथ बर्तन भी हाथ लगा। उस रात को केशव उसी झोंपड़ी सोया। दूसरे दिन शाम तक घूमता रहा और शाम को एक जंगल के निकट जा पहुँचा। उस जंगल में ढोलों की आवाज आ रही थी। उस आवाज़ को सुनकर जंगल के हाथी, सिंह, बाघ और अन्य जानवर घबराये भाग रहे थे।

थोड़ी देर बाद वह आवाज़ बंद हो गयी। केशव उसी दिशा में गया। पेड़ों के बीच एक जगह एक राक्षस बैठा हुआ था। उसके आगे एक ढोल था।

उस राक्षस ने केशव को देखते ही बुलाया–"अबे, खाने के लिए आ जाओ।"

"अच्छी बात है।" यह कहते केशव राक्षस से थोड़ी दूर पर लुढ़क पड़ा।

राक्षस केशव को खाने के लिए मांस देने लगा। केशव को संदेह हुआ कि वह मनुष्य का मांस है।

"मैं शाकाहारी हूँ, मांस नहीं खाता।" यह जवाब देकर केशव ने अपने बर्तन से खाना निकाला और खाने लगा।

"अरे, यह कैसा बर्तन है?" राक्षस ने केशव से पूछा।

"इसमें से तुम जो खाना चाहोगे, वही मिलेगा।" केशव ने जवाब दिया।

"वह बर्तन मुझे देकर तुम यह ढोल ले लो। यह मंत्र-तंत्र का ढोल है। इसके एक ओर बजाओ तो भयंकर से भयंकर जानवर भी भाग जायेंगे और दूसरी ओर बजाओगे तो अपार फौज निकल कर तुम्हारी रक्षा करेगी।" राक्षस ने समझाया।

"अच्छी बात है।" यह कहते केशव ने राक्षस को बर्तन दिया, उसने अपने हाथ में ढोल लेकर अपनी कुल्हाड़ी से राक्षस का सर काट डाला।

हीरा, कुल्हाड़ी, बर्तन और ढोल पाकर केशव कई देश घूमते आखिर एक राज्य में पहुँचा। उस देश का राजा बड़ा दुष्ट था। वह अपनी प्रजा को ही लूट कर उनको मार डालता था। उसके राज्य में कोई नया आदमी आता तो उसे पकड़वा लाता।

उस राज्य में क़दम रखते ही केशव को पकड़ने के लिए बारह सिपाही आ पहुँचे। केशव ने एक ओर ढोल बजाया तो वे डरकर भाग गये। यह बात जब राजा को मालूम हुई, तब उसने कई सैनिकों को भेजा। केशव ने फिर ढोल बजा कर उनको भी भगा दिया। इस बार राजा ने अपनी सारी सेना को भेजा। केशव ने अपना बर्तन औंधे मुंह करके बाढ़ पैदा की। सारी सेना उस बाढ़ में बह गयी।

राजा अकेला रह गया। केशव ने राजा के पास जाकर अपनी कुल्हाड़ी के सर पर मारा और कहा—"राजा का सर काट दो।"

राजा का सर कट कर उड़ गया।

सारी जनता ने प्रसन्न होकर केशव को गद्दी पर बिठाया और उसका राज्याभिषेक किया।

"हमारे देश में सेना नहीं रही, कैसे?" मंत्रियों ने केशव से पूछा।

केशव ने ढोल के दूसरी ओर बजा कर असंख्य सेना की सृष्टि की।

मंत्री सब बहुत खुश हुए। उन लोगों ने समझ लिया कि इतनी भारी सेना को आसानी से पैदा करने वाले राजा के रहते हमें दुश्मन का डर बिलकुल न होगा।
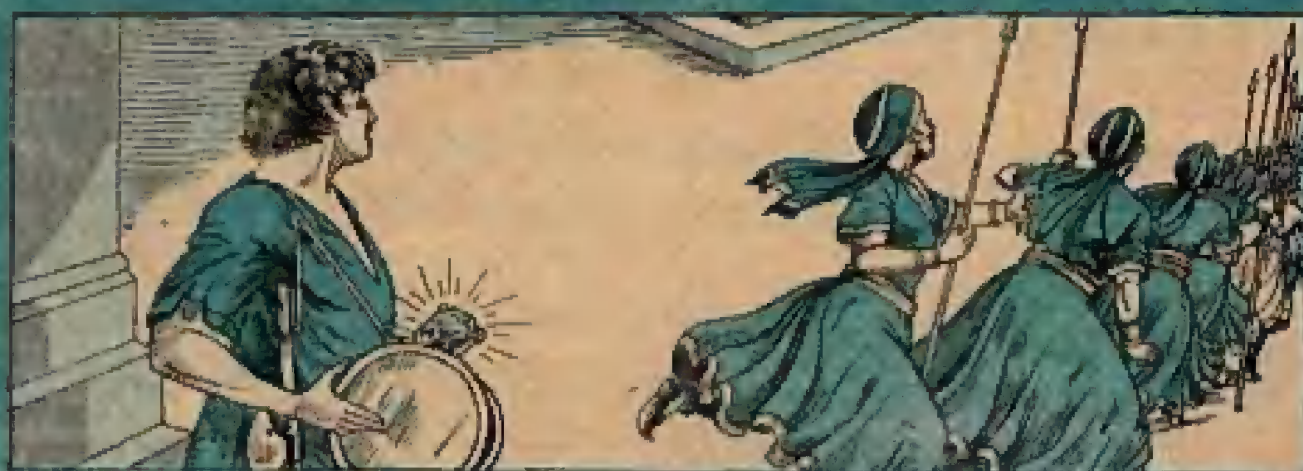
शशी दिवसधूसुरो, गलितयौवना कामिनी,
सरो विगत वारिजं, मुख मनक्षरं स्वाकृते:,
प्रभुर्धनपरायण:, सततदुर्गति स्सज्जनो,
नृपांगणगत: खलो, मनसि सप्तशल्यानि मे ॥ १ ॥

[कांतिविहीन दिन का चाँद, यौवन वंचित नारी, कमल विहीन सरोवर, अशिक्षित सुंदर युवक, धन के लोभी राजा, बदकिस्मत वाला गुणवान, राजा के आश्रय में स्थित दुर्जन मेरे मन को (शूल की भांति) पीड़ा देते हैं ।]

न कश्चि च्चंडकोपाना मात्मीयोनाम भूभुजां,
होतार मपि जुह्वानं स्पृष्टो दहति पावक: ॥ २ ॥

[प्रचण्ड क्रोधी राजा के कोई निकट व्यक्ति न होगा, अग्निहोत्र उसका होम करनेवाले के हाथ का स्पर्श होने पर भी उसे जो जलाता है !]

आरंभगुर्वी, क्षयिणी क्रमेण लघ्वी पुरावृद्धि मुपैति पश्चात्,
दिनस्य पूर्वार्ध परार्ध भिन्ना छायेव मैत्री खलसज्जनानां ॥ ३ ॥

[दुर्जनों की मैत्री प्रारंभ में प्रात:काल की छाया की भांति दीर्घ हो क्रमश: घटती जाती है । पर सज्जनों की मैत्री सायंकाल की छाया की भांति आरंभ में छोटी हो क्रमश: बढ़ती जाती है ।]

दुर्जन

शिलारथ

प्राचीनकाल में खड्गवर्मा तथा जीवदत्त नामक दो क्षत्रिय युवक देशाटन करते एक दिन की रात को शूरपुरनगर के समीप में स्थित जंगल में जा पहुँचे। वे दोनों रात को सोने के लिए उचित प्रदेश की खोज कर ही रहे थे कि उन्हें दूर पर टिमटिमाती रोशनी दिखाई दी। जब उन्हें यह मालूम हुआ कि उस रोशनी के समीप कोई आदमी है, तब उन्हें यह संदेह पैदा हुआ कि आखिर वह आदमी कौन होगा? हो सकता है कि वहाँ पर कोई लकड़हारा निवास करता हो, या लुटेरा हो अथवा मंत्र-तंत्र जाननेवाला दुष्ट हो!

दोनों के मन में यही संदेह पैदा हुआ, इसलिए वे दोनों युवक थोड़ी देर तक प्रकाश की ओर देखते मौन रह गये। जब जीवदत्त कुछ कहने को हुआ कि इतने में खड्गवर्मा आगे बढ़ने लगा। जीवदत्त ने उसका कंधा पकड़कर रोका और कहा—"दोस्त! तुम यह क्या करने जा रहे हो? क्या वहाँ जाना चाहते हो? चाहे तो हम दोनों किसी पेड़ के नीचे की जगह साफ़ करके यहीं सुबह तक आराम से सो सकते हैं।"

"अरे भाई, आराम से रात भर सोने के लिए जब एक घर दिखाई देता है तब हमें पेड़ों के नीचे तक़लीफ़ उठाने की क्या जरूरत है? वहाँ के लोग चाहे हमारा स्वागत करे या सामना करे, हमें विशेष नुक़सान न होगा। यदि उन लोगों ने

हमारा स्वागत किया तो दोस्तों की तरह उस घर में प्रवेश करेंगे, नहीं, सामना किया तो उनको मार भागकर उस घर पर अधिकार कर लेंगे।" खड्गवर्मा ने समझाया।

दोनों क्षत्रिय युवक साहस और बल-पराक्रम में किसी से कम न थे। पर खड्गवर्मा जल्दबाज था और जीवदत्त शांत स्वभाववाला था।

दोनों युवक मौन ही पैदल चलते उस रोशनी के निकट जा पहुँचे। वहाँ पर उन्हें एक छोटी-सी झोंपड़ी दिखाई दी। उस झोंपड़ी की खिड़की में से दिये की रोशनी फूट रही थी। जीवदत्त ने दर्वाज़े के निकट जाकर धीरे से ढकेल कर देखा। भीतर कुंड़ी चढ़ायी गयी थी। इस बीच खड्गवर्मा ने खिड़की के पास जाकर भीतर झाँक कर देखा। भीतर एक कंबल बिछाकर एक वृद्ध सो रहा था।

खड्गवर्मा ने जीवदत्त के पास लौटकर धीरे से कहा–"भीतर कोई बूढ़ा सो रहा है। रात के दूसरा पहर भी होने के पहले दर्वाज़ा बंद कर कौन यह आराम से सो रहा है?"

"यह दिन भर काम करनेवाला और दूसरों की हानि न करनेवाला कोई व्यक्ति होगा। तुम अपनी तलवार को म्यान में रख दो। क्या दर्वाज़ा खटखटावे?" जीवदत्त ने पूछा।

"और कर ही क्या सकते हैं?" ये शब्द कहते खड्गवर्मा ने ज़ोर से दर्वाज़ा खटखटाया।

आहट पाकर बूढ़ा जाग उठा। उसने दर्वाज़ा खोला। खड्गवर्मा तथा जीवदत्त ने उसे नमस्कार किया। तब जीवदत्त ने उस वृद्ध से पूछा–"महाशय, हम दोनों यात्री हैं। क्या आज की रात को इस झोंपड़ी में सोने की अनुमति दे सकते हैं?"

बूढ़े ने मुस्कुराते हुए दोनों का भीतर स्वागत किया और कहा–"आज रात के लिए ही नहीं, बल्कि तुम जितनी रात चाहें उतनी रातें यहाँ सो सकते हो! मगर तुम दोनों देखने में संपन्न परिवार के लगते हों, मेरे पास बिछाने के लिए कंबल को छोड़ कुछ है ही नहीं।"

"कंबल ही दे दीजिये। हम लोग यात्रा के समय पेड़ों के नीचे, पहाड़ों में निरी शिलाओं पर भी लेटकर कई दिन सो गये हैं।" जीवदत्त ने समझाया।

बूढ़े ने उन दोनों को दो कंबल दिये। वे उन्हें जमीन पर बिछा कर लेटने ही वाले थे कि वृद्ध ने पूछा–"तुम दोनों इतनी छोटी उम्र में देशाटन पर क्यों निकले हो? तुम लोग किस उद्देश्य से यात्रा कर रहे हो? धन के वास्ते या यश पाने के लिए?"

"ये दोनों एक दूसरे पर आश्रित हैं। इनमें कोई एक भी प्राप्त हुआ तो समझ लीजिये कि दूसरा भी प्राप्त हो गया। अपने गाँव में सुखपूर्वक जीने का कोई उपाय न देख हम देशाटन पर चल पड़े। हम लोग अपनी शक्ति एवं सामर्थ्यों का प्रदर्शन इस देश के राजा पद्मसेन के समक्ष करने के लिए पद्मपुर जा रहे हैं।" जीवदत्त ने बताया।

वृद्ध ने उन बातों पर प्रसन्न हो हँसकर कहा–"मैं उसी महाराजा का चरवाहा हूँ। वे कल इस प्रदेश में शिकार खेलने आनेवाले हैं। तुम लोगों को अपनी शक्ति एवं सामर्थ्यों का परिचय देने का अच्छा मौका मिलेगा...लेकिन..." ये शब्द कहते जीवदत्त की ओर नख-शिख पर्यंत ध्यान से देखा, तब पूछा–"तुम्हारा मित्र खड्गधारी है। तुम अपने हाथ में दण्ड लिये हुए हो, सर पर चोटी है। तुममें क्षत्रियों के लक्षण कम दिखाई देते हैं। उस लकड़ी के दण्ड

से तुम महाराजा के समक्ष वीरतापूर्ण कार्य क्या कर सकोगे?"

इस प्रश्न का उत्तर दिये बिना जीवदत्त ने अपना सर घुमा लिया। उस वार्तालाप को चुपचाप सुननेवाले खड्गवर्मा ने कहा– "महाशय, आप मेरे मित्र के बल और पराक्रम की शंका न कीजिये। यह बुद्धि तथा देहबल में भी मुझसे बढ़े-चढ़े हैं। उसके वेश में क्षत्रिय के लक्षणों के लोप होने का एक दूसरा कारण है।"

"मैं यह बात नहीं जानता था, इसीलिए पूछा। तुम लोग गलत न समझो। युवरानी पद्मावती की बात मैं अपने मुँह से क्या बताऊँ! तुम लोगों को खुद मालूम होगा। पर तुम लोगों को खिलाने के लिए इस वक्त मेरे पास रोटी का टुकड़ा तक नहीं है...मगर कंद और फलों की कमी नहीं है।" ये बातें कहकर वृद्ध ने एक कोने में स्थित फल लाकर उनके सामने रख दिये।

खड्गवर्मा तथा जीवदत्त ने उस वृद्ध के प्रति कृतज्ञता प्रकट की। फल खाकर सवेरे तक आराम से सो गये। पूरब में लाली देख बूढ़ा उठ बैठा। उसके साथ दोनों क्षत्रिय युवक भी जाग पड़े। कालकृत्यों से निवृत्त हो पास के तड़ाग में स्नान किया। फिर अपनी पोशाकें धारण कर वृद्ध की दी हुई रोटियाँ खायीं।

सूरज जब पूरब के आसमान पर चढ़ने लगा, तब जंगल में दूर पर कोलाहल सुनाई दिया। वृद्ध ने उस कोलाहल की ओर हाथ दिखाकर कहा–"लो, महाराजा शिकार खेलने जा रहे हैं। वे जिस जंगल में शिकार खेलने जा रहे हैं, उसमें सिंह और बाघों की कोई कमी नहीं। यह तुम्हारे लिए बड़ा अच्छा मौक़ा है। अब मैं अपने काम पर जा रहा हूँ।"

खड्गवर्मा और जीवदत्त झट महाराजा पद्मसेन के परिवार के पीछे चल पड़े।

महाराजा, मंत्री, कुछ अन्य राज्याधिकारी घोड़ों पर थे। उनके भटों में से कुछ लोग धनुष और बाण तथा कुछ लोग भाले धारण किये हुए थे। दुपहर से थोड़ी देर पहले ही सब लोग एक घने जंगल में पहुँच गये।

शिकार खेलना प्रारंभ हो गया। महाराजा घोड़े पर से ही बाघ और जंगली सुअरों का पीछा करते भाले से उन पर प्रहार करने लगा। कभी बाघ गरजते राजा का सामना करता तो उसका घोड़ा डरकर दूसरी ओर भाग खड़ा होता। ऐसी हालत में मंत्री सोमदेव या राजा के पीछे चलनेवाले राज्याधिकारी बाण चला कर उसका वध कर डालते थे।

खड्गवर्मा तथा जीवदत्त राजपरिवार में मिल गये। वे भागनेवाले शेर और बाघों को छोड़ उन्हीं जानवरों का शिकार करने लगे, जो क्रुद्ध हो गरजते उन पर झपटने को तैयार हो जाते थे। खड्गवर्मा को जब भी मौका मिलता, तब सिंह या बाघ की पिछली टाँगों को अपने बायें हाथ से पकड़ लेता और दायें हाथ की तलवार से उनका सर काट डालता। जीवदत्त पर यदि कोई खूँख्वार जानवर हमला कर बैठता, तो अपने हाथ के दण्ड से ही उसे मार डालता।
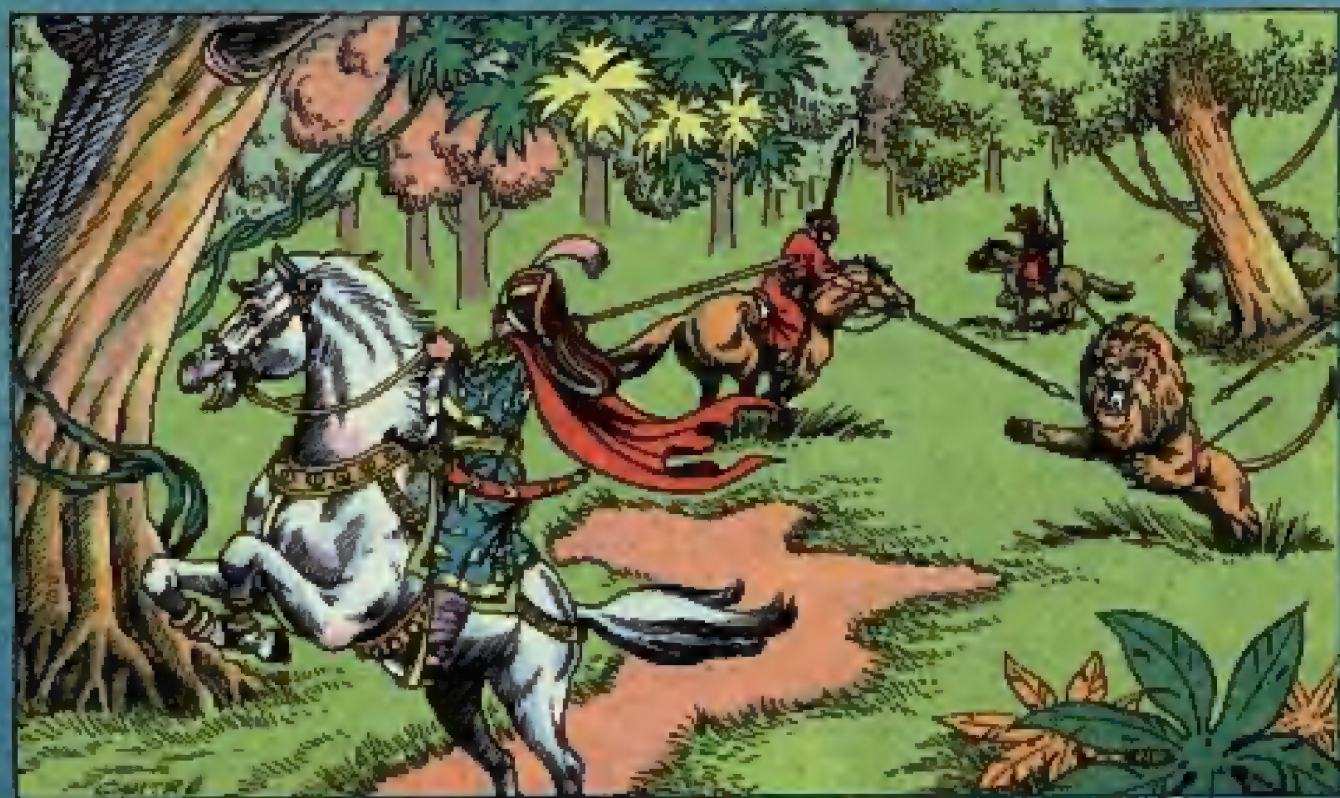
इन दोनों अपरिचित युवकों की हिम्मत और वीरता ने राजा के परिवार के कई लोगों को आश्चर्य में डाल दिया। किंतु शिकार खेलने के उत्साह में किसी ने यह बात राजा से नहीं कही। सब के आगे महाराजा पद्मसेन, उनके पीछे मंत्री सोमदेव अपने घोड़ों को दौड़ाते चले जा रहे थे। उन्हें अचानक एक घनी झाड़ी में से एक सिंह का गर्जन सुनाई दिया। यह सोचकर राजा और मंत्री भाले उठाये तैयार थे कि सिंह झाड़ी में से अचानक कूद पड़ेगा। लेकिन उनके विचार के विरुद्ध उस झाड़ी में से एक के बदले दो सिंह एक ही बार उनके घोड़ों पर झपट पड़े।

महाराजा पद्मसेन तथा सोमदेव अपने भालों को सिंहों पर फेंकने ही वाले थे कि उनके घोड़े बिदक गये और मुड़ते समय एक दूसरे से टकरा गये। राजा और मंत्री की पकड़ ढीली हो गयी और वे नीचे गिर पड़े। सिंह अपने मुँह बाये उन पर झपटने ही वाले थे कि खड्गवर्मा तथा जीवदत्त भयंकर रूप से गर्जन करते आगे कूद पड़े और उनकी पिछली टांगों को पकड़कर अपने हथियारों का उनके सर पर प्रहार किया। दोनों सिंह नीचे गिर कर छटपटाने लगे।

राजा पद्मसेन तथा मंत्री सोमदेव इस तरह बाल-बाल बच गये। अपनी असाधारण वीरता का परिचय देनेवाले खड्गवर्मा तथा जीवदत्त की ओर आनंद एवं आश्चर्य के साथ देखने लगे। राजा का सारा परिवार उनके चारों तरफ़ फैल गया।

राजा पद्मसेन ने उन दो युवकों से कहा—"तुम्हारी हिम्मत व वीरता पर ही नहीं, बल्कि सिंहों का वध करने में तुमने जो निपुणता दिखाई, उससे हम बहुत ही आनंदित एवं प्रभावित हुए। मैं आज तक

यह नहीं जानता था कि मेरे राज्य में ऐसे महान वीर हैं।"

मंत्री सोमदेव ने राजा से परामर्श करके उन दोनों युवकों के नाम जान लिये और उन्हें अपने नगर में आने का निमंत्रण भी दिया। घंटे भर सब ने वृक्षों के नीचे विश्राम किया। तदनंतर भोजन समाप्त कर नगर की ओर चल पड़े।

नगर-द्वार को पार कर राजा अपने परिवार के साथ राजमहल के निकट पहुँच ही रहा था कि उसकी दृष्टि राजपथ से भागनेवाली जनता पर पड़ी। राजा ने पहले संदेह किया कि कहीं दुश्मन की सेना नगर में घुस न आयी हो! मगर इसी बीच कुछ युवक दौड़ते आये और चिल्लाने लगे-"हट जाइये! पट्ट हाथी बंधन तोड़ भागा आ रहा है। महावत को मारकर सब को कुचलते, सूँड़ से फेंकते इधर ही आ रहा है।"

इस चेतावनी को सुनते ही खड्गवर्मा तथा जीवदत्त राजपरिवार में से आगे आये। वे देख ही रहे थे कि हाथी किस दिशा से आ रहा है, इतने में ऐरावत की भाँति दिखाई देनेवाला पट्ट-हाथी अपनी सूँड़ को जोर से इधर-उधर घुमाते चीत्कार करते दौड़ते आ रहा है। उसके मुँह से

खून बह रहा है। राजा और उसका परिवार खड्ग और बाणों के साथ उसका सामना करने को तैयार हो उठे।

खड्गवर्मा जीवदत्त को सावधान करके तेजी के साथ उसी की ओर बढ़नेवाले पट्ट हाथी की ओर बिजली की भाँति कूद पड़ा। उसकी टाँगों के बीच से निकल कर झट उसकी पूँछ पकड़ ली और उसकी पिछली टाँगों में से एक पर खड्ग का वार किया। उसी समय जीवदत्त हाथी की सूँड़ पकड़कर एक ही छलांग में उसके कुंभस्थल पर उछल पड़ा और उसके सर पर अपने दण्ड से सारी ताक़त लगाकर दे मारा।

हाथी भयंकर रूप से एक बार चीं‌कार कर उठा। खड्गवर्मा को अपनी सूँड़ से फेंकने के लिए घूम पड़ा, लेकिन इस बीच उसने खड्ग से उसकी दूसरी टाँग भी काट दी। उसी समय जीवदत्त ने अपने दण्ड से हाथी के सर पर जोर का प्रहार किया। हाथी की पिछली टाँगें टूट गयी थीं, इसलिए वह पीछे की ओर टूट पड़नेवाला था, किंतु सर पर भारी वार होने के कारण आगे की ओर झुक गया, मगर पकड़ ढीली होने से बग़ल की ओर लुढ़क पड़ा।

दूसरे ही क्षण राजमहल के ऊपर से हर्षनाद सुनाई दिये। खड्गवर्मा तथा जीवदत्त ने सर उठाकर ऊपर देखा। राजकुमारी पद्मावती ने अपनी सखियों के समेत उन दोनों वीरों पर फूलों की वर्षा की। उस दृश्य को देख राजा पद्मसेन प्रसन्न हो बोला–"राजकुमारी को इतने दिनों बाद अपने पसंद का वर मिल गया है।"

"महाराज, वीर एक नहीं, दो हैं। इन दोनों में से युवरानी किसे पसंद करती है? आप एकांत में उनके साथ वार्ता कीजिये।" मंत्री सोमदेव ने सलाह दी।

(और है।)
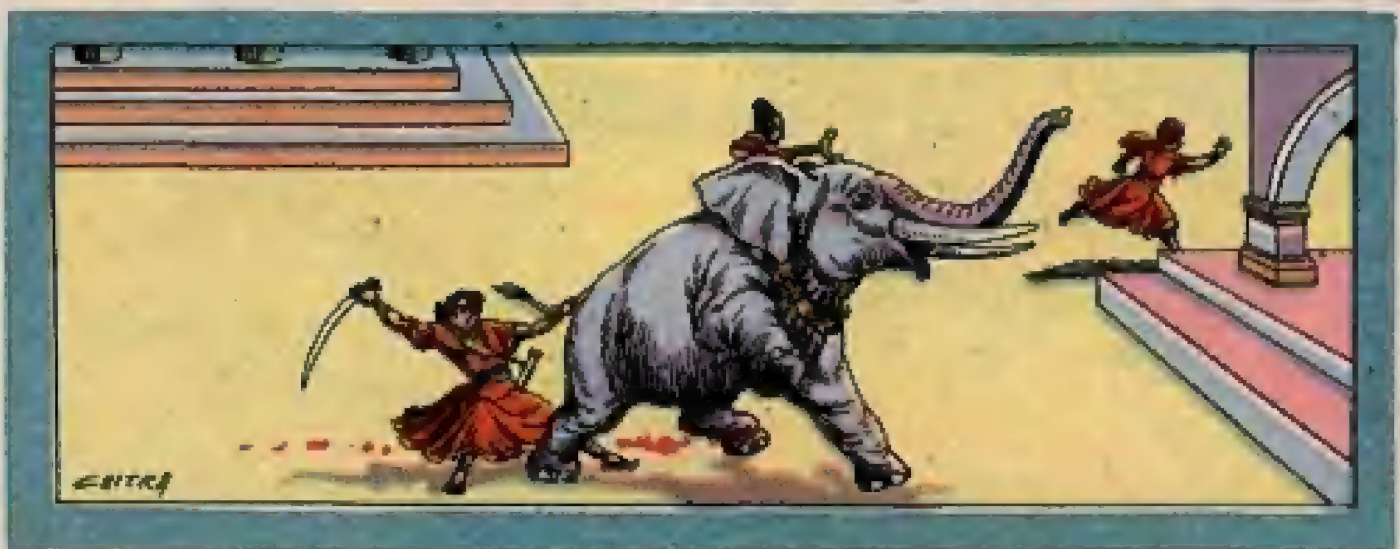
संस्कार

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भाँति श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने यों कहा-"राजन्, तुम किसी कामना को लेकर इतनी सारी मेहनत करते हो, मगर तुम्हारी इच्छा की पूर्ति होने पर सचमुच तुमको तृप्ति मिलेगी, इसकी कोई उम्मीद नहीं है! प्राचीन काल में कुरंग का जो हाल हुआ, वही तुम्हारा भी हो सकता है। श्रम को भुलाने के लिए तुमको मैं कुरंग की कहानी सुनाता हूँ, सुनो।"

बेताल यों कहने लगा :-"पुराने जमाने में जयशील नामक राजा हेमंत देश पर राज्य करता था। वह जंगली जानवरों को प्राणों से पकड़ लाने में प्रवीण था।

जयशील एक दिन जंगल से एक हिरन पकड़ लाया। राजा के कोई संतान न

वेताल कथाएँ

थी। न मालूम क्यों, इस हिरन पर राजा के मन में अपार वात्सल्य पैदा हुआ। राजा ने उस हिरन का नाम कुरंग रखा और उसे अपने सगे पुत्र की भाँति देखने लगा। राजभवन के सभी लोग कुरंग को राजकुमार जैसा स्नेह देने लगे।

लेकिन कुरंग को राजमहल में वह आजादी न थी, जो उसे जंगल में प्राप्त थी। यह बात उसे खटकती थी। फिर भी उसने मानवों की महान शक्तियों को समझ लिया था। मानवों ने अपने से अधिक शक्तिशाली सिंहों, बाघों और हाथियों को पकड़ लाकर पिंजड़ों में बंद किया है। मानवों के प्राणों को पल भर में हरनेवाले खूंख्वार जानवर उनके हाथों में फँसकर उनके अधीन शिक्षण पा रहे हैं।

"वास्तव में जन्म हो तो मानवों का जन्म सफल है।" कुरंग ने सोचा।

मगर दिन प्रति दिन कुरंग में आजादी की कामना बढ़ती ही गयी। वह भाग जाने के मौक़े के इंतज़ार में था। आखिर उसे एक दिन मौक़ा मिला, तब वह कुरंग भागकर जंगल में चला गया।

जंगल में भागते ही वह कुरंग सीधे एक मुनि के आश्रम में चला गया। उसे उस मुनि को देखते ही अपार आनंद हुआ।

'मुनि भी उत्तम मानव है, साथ ही वह उसे बंधन में नहीं रखता। मुनि के साथ रहने से उसे स्वेच्छा के साथ मानव का स्नेह भी प्राप्त होगा।' कुरंग यह सोचकर आश्रम में ही रहने लगा।

मुनि को यह समझते देर न लगी कि कुरंग मानव जाति के प्रति अपार आदर भाव रखता है। उसके मन में यह विचार पैदा हुआ कि अपने तपोबल से कुरंग को मानव का रूप दे तो वह कुरंग क्या करेगा? तुरंत मुनि ने अपने कमण्डल का जल कुरंग पर छिड़क दिया और उसे मनुष्य के

रूप में बदल दिया। उसके दूसरे ही क्षण कुरंग एक युवक के रूप में खड़ा हो गया।

कुरंग इस बात पर बहुत प्रसन्न हुआ कि उसे मानव का जीवन प्राप्त हो गया है। उसने मुनि की सेवा करते कुछ दिन आश्रम में ही बिताये। मगर उसका मन अब नगर में ही लगा था। यह जंगल और आश्रम उसे बिलकुल अच्छा न लगता था। मुनि हमेशा तपस्या में लीन रहता है। जब तप न भी करता, तब भी वह कुरंग से बात नहीं करता। वहाँ पर न लोगों का आना-जाना होता है और न कोई मनोरंजन और विनोद ही होता है।

एक दिन कुरंग मुनि से बताये बिना ही नगर में भाग गया। नगर में वैसे लोगों की बड़ी भीड़ थी, मगर किसी ने उसका हाल-चाल नहीं पूछा। कुछ लोगों ने उसका परामर्श करते हुए पूछा--"तुम्हारा नाम क्या है? तुम किस गाँव के रहनेवाले हो? क्या काम करते हो?" लेकिन वह उनके सवालों का जवाब नहीं दे पाया।

पर कुछ लोगों के सामने उसने अपनी इच्छा प्रकट की--"मैं बाघ और सिंहों को पकड़कर पिंजड़ों में बंद कर सकता हूँ।" लेकिन वह खुद नहीं जानता था कि यह काम वह कैसे कर सकेगा।
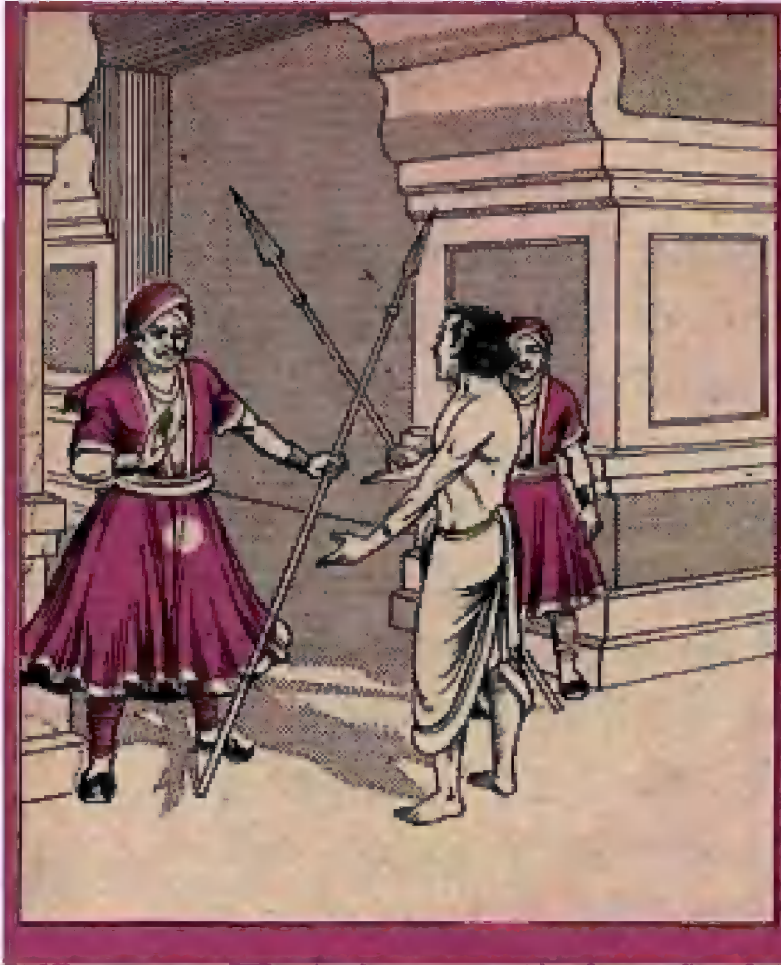
नगर में प्रवेश करने के बाद कुरंग को कुछ न सूझा। आखिर वह राजमहल में घुसने लगा, पर द्वारपालों ने उसे रोका।

"मैं पहले यहीं पर था।" कुरंग की बातें सुनकर द्वारपाल सब हँस पड़े।

कुरंग की समझ में न आया कि हिरन के रूप में रहते जिन लोगों ने उसके प्रति बड़ा स्नेह दिखाया, वे लोग उसे मानव-रूप में देख क्यों उसके प्रति लापरवाही दिखाते हैं!

कुरंग राजमहल में प्रवेश न कर पाया, इसलिए मानवों की संगति पाने के ख्याल से कुछ लोगों के पीछे पड़ा। यह देख उन लोगों ने उसे भगाया। कुरंग को कुछ करते न बना। घूम-फिरकर वह थक गया। भूख सता रही थी। किसी पेड़ के पत्ते चबाने व घास चरने के लिए तो वह अब हिरन न था, मानव था।

कुरंग ने देखा कि कुछ लोग घर-घर और द्वार-द्वार जाकर भीख माँग रहे हैं। कुरंग ने भी उनका अनुकरण किया। लेकिन कुछ लोगों ने उसे डांटा–"देखने में बैल जैसे हो? कोई काम-वाम करके अपना पेट क्यों नहीं पालते?" किसी गृहिणी ने उस पर रहम खाकर बासी भात दे दिया। उसे खाते ही कुरंग को कै हुई। उसे अब यह याद सताने लगी कि राजा के महल में हिरन के रूप में रहते समय उसे कैसे पक्वान्नों की खुशबू आया करती थी।

वह गली से होकर गुजर रहा था। एक घर से उसे अच्छे व्यंजनों की गंध आयी। वह भीतर चला गया। रसोई घर में बने-बनाये पदार्थ देखे। वहाँ पर कोई न था। वहीं बैठे वह जल्दी-जल्दी खाने लगा। इसी बीच कोई वहाँ आ पहुँचा और चिल्ला पड़ा–"चोर, चोर! पकड़ो! पकड़ो।" लोगों ने कुरंग को पकड़कर खूब पीटा और जेल में रखवाया।

कुरंग के मन में अब मानव जीवन से विरक्ति पैदा हुई। पहरेदारों की आँखों में धूल झोंककर वह कारागृह से निकल पड़ा। फिर जंगल में जाकर मुनि के आश्रम में पहुँचा। मुनि के पैरों पर गिरकर रोते हुए बोला–"महात्मन, मुझे यह मानव जीवन नहीं चाहिये, मुझे फिर वही हिरन बना दो।" मुनि ने कमण्डल का जल छिड़ककर कुरंग को फिर से हिरन बनाया और उसे आश्रम में ही रहने दिया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा–"राजन, मानव जीवन के बारे में कुरंग के विचार बदल जाने का कारण क्या है? एक बार मानव जीवन पानेवाला फिर से हिरन बनने के लिए तैयार हो जाता है। क्या हमें यह समझना होगा कि मानव का जीवन श्रेष्ठ नहीं है? इस संदेह का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सर टुकड़े-टुकड़े हो जायगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा–"मानव जीवन के बारे में कुरंग के विचार बदलने के दो भिन्न कारण हैं। यदि सुख ही जीवन का परम लक्ष्य माने तो मानवों में अधिकांश हीन व्यक्ति उतना सुख न पायेंगे। उन्हें जो तक़लीफ़ें होती हैं, उनका सामना समुचित संस्कारों के साथ करना होता है। ऐसा मानव-सहज संस्कार कुरंग को प्राप्त नहीं है। दूसरा कारण यह है कि कुरंग अपने कर्मों की परिपक्वता के द्वारा मानव जीवन प्राप्त न कर सका है। मुनि के तपोबल से उसे मानव का रूप मिल गया है। इसलिए मानव का जीवन उसे किसी भी रूप में समुचित प्रतीत न होगा। इसलिए वह फिर से हिरन बनने को ललचा उठा।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)
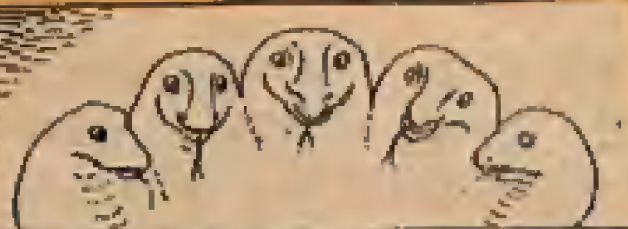
नागेन्द्र

एक गाँव में किशोर नामक एक युवक था। उसके अपना कोई न था। वह नये प्रदेशों और नये लोगों को बहुत पसंद करता था। जहाँ भी जो कोई किशोर को पुकारता तो बस वह दिल खोलकर उन लोगों से बात किया करता था।

एक दिन किशोर ने एक बूढ़े से बात करते हुए कहा–"दादा, मैंने सारी दुनिया देखी और देखना चाहता हूँ।"

इस पर बूढ़े ने जवाब दिया–"बेटा, इस दुनिया को जो भी चाहे देख सकता है। लेकिन इसके नीचे और सात लोक हैं। उन्हें देखनेवाला ही सबसे बड़ा आदमी कहलायगा।"

उस क्षण किशोर के मन में पृथ्वी के नीचे के लोकों को देखने की इच्छा हुई। उसने किसी के मुँह से सुना था कि नीचे के लोकों में जाने के लिए कहीं सुरंग हैं। इसलिए किशोर देशाटन करते कहीं कोई सुरंग दिखाई देता तो उसमें उतर कर देखा करता था।

एक दिन वह पहाड़ों के बीच घूम रहा था। उसे एक गुफा दिखाई दी। वहाँ पर मवेशी चरानेवालों से किशोर ने पूछा कि उस गुफा के अन्दर क्या है?

"भाई साहब, वह एक पाताल की गुफा है।" चारवाहों ने जवाब दिया।

"क्या उसमें उतर कर जाने से पाताल में पहुँच सकते हैं?" किशोर ने पूछा।

"कौन जाने? उसमें कोई जाता भी तो नहीं।" मवेशियों ने कहा।

किशोर उस गुफा में उतर पड़ा। थोड़ी दूर आगे बढ़ने पर उसे सुरंग दिखाई दिया। अंधेरे में टटोलते हुए किशोर उतर गया। ज्यों ज्यों वह नीचे उतरता गया त्यों-त्यों गरमी बढ़ती गयी। फिर भी उसकी

कुमारी गीता अग्रवाल

परवाह किये बिना किशोर और नीचे उतर पड़ा। थोड़ी देर बाद नीचे उसे रोशनी दिखाई दी। वहाँ पर कुछ जल रहा था। किशोर ने आगवाले उस लोक में क़दम रखा।

वहाँ पर उसे एक विचित्र आदमी दिखाई पड़ा। उसने किशोर से पूछा—"तुम कौन हो? भूलोक के निवासी लगते हो! इस लोक में क्यों आये हो?"

"मैं नीचे के लोकों को देखने की इच्छा रखता हूँ। इसीलिए आया हूँ।" किशोर ने जवाब दिया।

"तुम आ तो गये, पर कैसे लौट जाओगे? यह मुमकिन नहीं।" उस विचित्र आदमी ने उत्तर दिया।

"इसकी मुझे चिंता नहीं है। मेरे लिए सब लोक बराबर हैं। नीचे के लोकों को मैं कैसे देख सकता हूँ? यदि तुम जानते हो तो मुझे बता दो।" किशोर ने पूछा।

विचित्र आदमी ने अपने पैरों के चप्पल उतारकर किशोर को देते हुए कहा—"इन चप्पलों को तुम पहनोगे, तो तुमको निचले लोकों में जाने की ताक़त मिल जायगी। मगर तुमको ऊपर आने में ये चप्पल मदद नहीं दे सकते।" किशोर ने बड़ी खुशी के

साथ वे चप्पल पहने। तुरंत उसे गरमी की तक़लीफ़ से मुक्ति मिली। उसने वह सारा लोक घूमकर देखा।

किशोर ने बूढ़े से और नीचे के लोक में जाने का मार्ग पूछा। बूढ़े के कहे अनुसार वह और नीचे के लोक में जा पहुँचा। वहाँ पर मनुष्य बहुत ही कम थे। वहाँ से किशोर एक एक लोक को देखते भूख लगने पर किसी से खाना माँगकर खाते हुए नाग-लोक में जा पहुँचा।

नाग-लोक बाक़ी लोकों से बहुत ही खराब था। वहाँ कोई मनुष्य ही उसे दिखाई न दिया, सब कहीं साँप ही साँप थे।

और लोकों में जाने पर किशोर को पश्चात्ताप न हुआ, पर नागलोक में पहुँचते ही वह बहुत ही पछताया। उसे यह सोचकर बड़ा दुःख हुआ कि उसे सदा के लिए इसी लोक में रहना पड़ेगा।

इस बीच उसे एक भयंकर कंठ सुनाई पड़ा—"तुम कौन हो?" किशोर ने मुड़कर देखा तो वहाँ पर एक भयानक पक्षी खड़ा था।

"प्रभु! मैं अपनी मूर्खता की वजह से निचले लोकों को देखने के कुतूहल को लेकर यहाँ आया हूँ। आप मेरी इस बेवकूफ़ी को क्षमा कर दीजिये और मुझे अपने लोक में भेज दीजिये। मैं जिंदगी भर आपके प्रति कृतज्ञ रहूँगा।" किशोर ने हाथ जोड़कर पक्षी से निवेदन किया।

पक्षी ने थोड़ी देर सोचकर उत्तर दिया—"तुमने बड़ी भारी गलती की। मैं देखूँगा कि तुम्हारी इच्छा की पूर्ति हो जाय! मैं इन सर्पों का सम्राट हूँ। मुझे गरुड़ कहते हैं। मैं एक सर्प को तुम्हारी सहायता के लिए तुम्हारे लोक तक भेज देता हूँ, तुम अपने लोक में पहुँचते ही उस सर्प को लौटा दो। ये सर्प बड़े ही घमण्डी हैं। तुम मेरा एक पर अपने हाथ में लो। उस 'पर' के साँप के शरीर से लगने पर वह तुम्हारी बात मान लेगा।"

इसके बाद गरुड़ ने एक महा सर्प को बुलाकर आदेश दिया—"इस आदमी को भूलोक में पहुँचा दो। उसके कहे अनुसार करो। यह मेरी आज्ञा है।"

महा सर्प के साथ किशोर निचले लोकों को पार कर भूलोक में पहुँचा। यात्रा कई दिन चली। इसलिए सर्प अपने लिए आवश्यक खाना नागलोक से ही साथ लाया था। रास्ते में जब जब सर्प ने किशोर को तंग किया, तब तब किशोर ने उसे गरुड़ का पर निकालकर उसे डराया।

"तुमने मेरी बड़ी मदद की । अब तुम अपने लोक को लौट जाओ । वरना तुम्हारे इस वेश को देख इस लोक के लोग डर जायेंगे ।" किशोर ने कहा ।

"मुझे रास्ते के लिए खाना दिलाओ । मैं चला जाऊँगा । अपने लोक से जो खाना साथ लाया था, वह चुक गया है ।" सर्प ने पूछा ।

"तुमको कितना अन्न चाहिए?" किशोर ने सर्प से पूछा ।

"पाँच भैंस ।" सर्प ने जवाब दिया ।

"मैं देखता हूँ कि शायद कहीं मिल जाय! तब तक तुम उस पहाड़ी गुफा में रहो ।" किशोर ने समझाया ।

किशोर ने सर्प को खाना लाने का वचन तो दिया, पर पाँच भैंसें लाने की उम्मीद उसे न थी । किसी से भैंस खरीदना भी चाहे तो उसके पास एक भी कौड़ी नहीं है । उसे अपने ही खाने के लिए दूसरों के सामने हाथ फैलाना होगा ।

किशोर थोड़ी दूर चलकर एक गाँव में पहुँचा । उसने गाँव के मुखिये के घर जाकर समझाया कि वह नाग लोक से लौट रहा है । जल्द ही यह खबर सारे गाँव में फैल गयी । सब ने किशोर को

घेर कर उसके अनुभवों को आश्चर्य के साथ सुना ।

धीरे-धीरे यह खबर आस-पास के गाँवों में भी फैल गयी । सब कोई किशोर के अनुभव सुनने लगे । उसका बड़ा आदर होने लगा । इस उल्लास में किशोर सर्प और उसके खाने की बात भूल बैठा । इसका कारण यह है कि उसने किसी से अपने साथ आये हुए साँप और उसे खाना ले जाने की बात नहीं बतायी थी ।

धीरे धीरे कई गाँवों से भेड़, बकरियाँ और गायें गायब होने लगीं । एक भयंकर सर्प को चार-पाँच ग्रामवासियों ने भी देखा

था। शायद वही इन जानवरों को खाता हो! यह संदेह सभी गाँवों में फैल गया।

यह खबर मिलते ही किशोर बड़ा दुःखी हुआ। वह जानता था कि उसी के कारण इन ग्रामवासियों पर यह विपदा आ पड़ी है। मगर उसने यह बात किसी से नहीं बतायी।

इतने में एक और भयंकर घटना हुई। इन्हीं दिनों में दो बालक और तीन बालिकाएँ भी गायब हो गयीं। यह भी साँप का काम है। उसे मारने के लिए गाँव के साहसी युवक निकल रहे थे। किशोर ने उनसे बताया–"मैं भी तुम लोगों के साथ चलता हूँ।"

युवकों ने उसे समझाया–"तब तो तुम भी कोई हथियार अपने हाथ में लो।" युवकों ने भाले, कुल्हाड़ियाँ और लाठियाँ हाथ में लीं।

"मेरे लिए किसी हथियार की जरूरत नहीं।" किशोर ने उन युवकों से कहा और वह भी उनके साथ चल पड़ा।

सब पहाड़ी गुफा के पास पहुँचे। उनकी आहट पाकर साँप गुफा से बाहर निकला। उसे देखते ही डर के मारे सभी युवक भाग गये और दूर जा खड़े हुए।

किशोर ने साँप के निकट जाकर क्रोध से पूछा–"यह तुम क्या कर रहे हो? अभी तक तुम नागलोक को क्यों नहीं लौटे?"

"तुमने नहीं कहा था कि मेरे लिए खाना ला दोगे? मैं तुम्हारा ही तो इंतजार कर रहा हूँ।" सर्प ने जवाब दिया।

"मेरे आहार लाने तक तुम चुप कहाँ रहे? जो भी जानवर मिला, पकड़कर खा डाला। जानवरों को तो खा डाला, साथ ही बच्चों को भी खाते हो? यह कैसा अन्याय है?" किशोर ने गरज कर पूछा।

"क्या मैंने बच्चों को खाया? तुम से किसने कहा? अन्दर आकर अपनी आँखों

से तो देखो!" ये शब्द कहते सर्प किशोर को गुफा के भीतर ले गया।

गुफा का भीतरी भाग विशाल था। कहीं कहीं ऊपर आसमान भी दीख रहा था। गुफा में पाँच बच्चे उल्लास के साथ खेल रहे थे।

किशोर ने उन बच्चों के पास जाकर कहा—"तुम्हारे माँ-बाप तुम लोगों के लिए परेशान हैं, तुम यहाँ बेफ़िक्र खेल रहे हो?"

"हम यहीं रहेंगे। हमको यहीं पर अच्छा लगता है। साँप पर हम सवार होते हैं। उसकी पूँछ पकड़कर हम झूला झूलते हैं।" एक बच्चे ने किशोर से कहा।

"ये बच्चे मेरे साथ खेलते हैं। उनको तुम मत ले जाओ।" साँप ने किशोर से बिनती की।

"तुम्हारे सुख के वास्ते इन बच्चों के माँ-बाप रोते रह जायें? यह नहीं हो सकता। इन बच्चों को तुम मेरे साथ भेज दोगे तो तुम्हें पाँच भैंस मैं शाम तक ला देता हूँ। ठीक है न?" किशोर ने साँप से कहा।

"तुम्हारी जैसी इच्छा!" साँप ने चितापूर्ण स्वर में जवाब दिया।

किशोर उन पाँच बच्चों को अपने साथ ले गुफा के बाहर आया। बाहर खड़े युवकों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। अपने बच्चों को सकुशल लौटे देख उन बच्चों के माँ-बापों ने किशोर का बड़ा सम्मान किया।

"मैंने तुम लोगों का यह जो उपकार किया है, इसके बदले मुझे पाँच भैंसें दे दीजिये।" किशोर ने उन लोगों से पूछा।

"पाँच नहीं, पाँच सौ भैंसें भी चाहो तो दे देंगे।" बच्चों के माँ-बाप ने बताया।

किशोर पाँच भैंसें लेकर साँप की गुफा के पास गया और बोला–"इन भैंसों को लेकर तुम अपने लोक में चले जाओ। मेरी इज्जत बनी रहेगी।"

"किशोर! मुझे यहाँ से न भेजो। मुझे तो यही लोक अच्छा लगता है। तुम इन भैंसों को रख लो। मैं इस प्रदेश को छोड़ कहीं चला जाऊँगा। मेरे जरिये तुम्हारा कभी बदनाम न होगा। तुम निश्चित रहो।" सर्प ने बिनती की।

किशोर को साँप पर दया आयी। पर प्रकट में गंभीर स्वर में बोला–"कल से तुम इस प्रदेश में दिखाई दोगे तो बहुत बुरा होगा, समझें।" इस तरह साँप को चेतावनी दे किशोर अपने गाँव लौटा।

इसके बाद उस प्रदेश में साँप का डर जाता रहा। कई गाँववालों ने मिलकर किशोर को अपना प्रधान बनाया।

लगभग एक साल बीत गया। सब जगह यह खबर फैल गयी कि पाँच सौ कोस की दूर के राज्य से राजकुमारी और उसकी सखियों को एक भयंकर सर्प उठा ले गया है। उस देश के राजा ने यह ढिंढोरा पिटवाया है कि जो युवक साँप से राजकुमारी की रक्षा करेगा, उसका राजकुमारी के साथ विवाह किया जायगा।

किशोर के मन में यों तो राजकुमारी के साथ विवाह करने की फ़िक्र न थी, लेकिन वह यह सोचकर बड़ा दुःखी हुआ कि उसकी वजह से भूलोकवासी दुःखी हो रहे हैं। इस बार सर्प को नागलोक में भेजने का उसने निश्चय कर लिया। उसने पाँच सौ कोस की यात्रा की और वहाँ के राजा से भेंट की।

किशोर को वहाँ मालूम हुआ कि राजकुमारी अपनी सहेलियों के साथ पालकी में वन-विहार करने जा रही थी, तब एक

महा सर्प ने उनको रोका और कहारों के साथ सबको अपने साथ ले गया और उन सबको पहाड़ी गुफा में छिपा रखा है। राजा ने उस साँप को मारने कई सैनिकों को भेजा, पर साँप ने जो आग उगली, उससे झुलस कर सभी सैनिक वापस भाग आये।

किशोर ने साँप के प्रदेश का पता लगाया और वह अकेले ही वहाँ पहुँचा। आहट पाकर साँप आग उगलते बाहर आया।

किशोर ने गरुड़ का पर निकालकर कहा—"ओह, तुम मुझ पर भी हमला करने तैयार हो गये हो?"

"अरे भाई, तुम राजकुमार जैसे लगते हो, इसलिए मैं तुमको पहचान नहीं पाया। किशोर, मैंने नहीं सोचा था कि तुम मेरे वास्ते इतनी दूर चले आओगे?" साँप ने कहा।

"तुमने राजकुमारी और बाक़ी लोगों को क्या किया?" किशोर ने क्रोध में आकर पूछा।

"किशोर! मैंने उनकी कोई हानि नहीं की। अकेले रह न सका, इसलिए समय काटने उन्हें साथ ले आया हूँ। देखो

किशोर, राजकुमारी रत्न जैसी युवती है। तुम इसे अपने साथ ले जाकर इसके साथ शादी करो। तुम ने मुझे नागलोक को नहीं लौटाया, इसलिए मैं इस रूप में तुम्हारा उपकार कर रहा हूँ।" साँप ने उत्तर दिया।

"तब तो क्या तुम नागलोक को लौट न जाओगे?" किशोर ने पूछा।

"किशोर! मुझे वहाँ पर अच्छा नहीं लगता। यही लोक मुझे अच्छा लगता है। मान लो कि तुम मुझे वापस भेज दोगे, तो तुम्हारा क्या बनता है?" साँप ने पूछा।

"तुम इसी तरह के अत्याचार करते होगे तो मेरा ही तो बदनाम होगा?" किशोर ने जवाब दिया।

"सुनो, किशोर! मैं अकेला नहीं रह सकता। एक काम करो। गरुड़ के पर से मेरे सर के दोनों तरफ़ इस तरह रगड़ो, जिस से मेरे दो और सर हो जायें। उन पर फिर से रगड़ोगे तो मेरे दो और सर निकल आयेंगे। तब मैं अपने आप तरह-तरह के समाचार कहते-सुनते अपना समय काट लूँगा।" साँप ने समझाया।

"अच्छी बात है, पहले तुम राजकुमारी और उसके परिवार को मुक्त कर दो।" किशोर ने पूछा।

किशोर को लगा कि राजकुमारी अथवा उसके साथ रहनेवाले लोग साँप से बिलकुल नहीं डरते। राजकुमारी साँप से विदा लेकर अपनी पालकी पर जा बैठी और अपने घर की ओर चल पड़ी।

किशोर ने साँप के सर को गरुड़ के पर से रगड़ कर उसके पाँच सर बना दिये।

"अब मैं मनुष्यों के साथ खिलवाड़ नहीं करूँगा। किशोर, मेरे जरिये तुम्हारा बदनाम कभी न होगा। मेरी बात पर यक़ीन करो।" साँप ने कहा।

किशोर सीधे राजमहल पहुँचा। राजा का सत्कार पाकर राजकुमारी के साथ विवाह किया।

इसके बाद फिर कभी साँप की वजह से कोई हलचल नहीं मची। जब तब कोई कहा करता था कि 'मुझे पाँच सरोंवाला नागेन्द्र दिखाई दिया है।' अनेक लोगों ने उसे देवता माना और उसकी पूजा की। धीरे धीरे लोगों के मुँह में पकड़कर पाँच सर बारह हुए और बारह से एक हजार हो गये। साथ ही नागेन्द्र के बारे में अनेक कथा-कहानियाँ भी चल पड़ीं।

योग्य राजा

सैकड़ों साल पहले की बात है। रत्नगिरि के राजा के जुड़वाँ बच्चे हुए। राजा ने उनका अजयसिंह और विजयसिंह नामकरण किया और दोनों को बड़े ही लाड़-प्यार से पालने लगा।

राजा ने उन राजकुमारों को एक योग्य गुरु के यहाँ समस्त प्रकार की विद्याएँ सिखलायीं। सभी विद्याओं में दोनों राजकुमार समान निकले।

ज्यों ज्यों राजकुमार युवा होते गये त्यों त्यों राजा के मन को यह चिंता सताने लगी कि उसके बाद किसको राजा बनाये?

राजा ने राजगुरु से पूछा। पर उसने कहा–"महाराज, अजय और विजय में हमें कोई फ़र्क दिखाई नहीं देता। दोनों सभी विद्याओं में एक दम बराबर दीखते हैं।"

यह बात सुनकर राजा और निराश हो गया। उसने अपने मंत्री के सामने यह समस्या रखी।

"महाराज, आप अजय और विजय को समान रूप से प्यार करते हैं, इसीलिए आप के सामने यह समस्या पैदा हो गयी है। अब हमें यह निर्णय करना होगा कि इन दोनों राजकुमारों में से कौन आपसे अधिक प्यार करते हैं। जिसका आप पर अधिक प्रेम हो, उसी को आप युवराज बना दीजिये।" मंत्री ने सलाह दी।

"मैं समझता हूँ कि मेरे दोनों पुत्र मुझ से बराबर प्रेम करते हैं। यदि उनके प्रेम में थोड़ा–बहुत अंतर हो तो हम कैसे उसे जान सकेंगे?" राजा ने मंत्री से पूछा। इस पर मंत्री ने सोचकर एक उपाय बताया।

कृष्ण कुमार

एक दिन राजा शिकार खेलने जाते हुए अजय और विजय को अपने साथ ले गया।

रास्ते में एक आदमी दौड़ता आया और बिनती की–"महाराज, हमारे गाँव को डाकू लूट रहे हैं। आप हमारी रक्षा कीजिये।"

राजा ने अपने पुत्रों की ओर देखा। अजय और विजय ने अपने पिता के विचार को भाँप लिया। तब वे दोनों उस आदमी के साथ गाँव की ओर चल पड़े। वे थोड़ी दूर ही गये थे कि पीछे से एक राज भट दौड़ता आया और बोला–"राजकुमार, महाराजा को चोरों ने घेर लिया है। महाराज उनके साथ युद्ध कर रहे हैं।"

यह बात सुनते ही विजय ने कहा–"अजय, चलो! पहले हम पिताजी की रक्षा करेंगे।"

"नहीं, विजय! पिताजी की रक्षा हमारे करने की कोई ज़रूरत नहीं। वे स्वयं अपनी रक्षा कर सकते हैं। गाँववाले ही अपनी रक्षा नहीं कर सकेंगे।" अजय ने जवाब दिया।

फिर भी विजय का मन अशांत था। वह अपने पिता की रक्षा करने के हेतु शीघ्र चला आया, लेकिन देखता क्या है, राजा और मंत्री एक जगह बैठे आराम से बात कर रहे हैं।

अजय ने भी गाँव में जाकर देखा, वहाँ पर लुटेरों की कोई गड़बड़ न थी।

"देखा है न, महाराज! आप पर विजय का ही प्रेम अधिक है। उसी को युवराज बना दीजिये।" मंत्री ने राजा से कहा।

"नहीं, अजय का प्रेम मुझ पर कम नहीं है। उल्टे मुझ पर विश्वास भी अधिक है। साथ ही प्रजा के प्रति उसके मन में आदर का भाव है। इसलिए वही राजा बनने योग्य है।" राजा ने समझाया।

धूर्त बुढ़िया

[५]

रात को उस घर का मालिक अपने नौकर के साथ लौटा। देखता क्या है, दर्वाजे पर ताला नहीं लगा है। घबराये हुये वह भीतर गया। सारा घर ढूंढा, पर सारी चीजें सुरक्षित थीं।

नौकर पानी भरने कुएँ के पास पहुँचा। रस्सा जो कुएँ में छोड़ा तो बाल्टी भारी लगने लगी। मगर कुएँ में किसी ने रस्से को पकड़ लिया था।

"बाप रे बाप! कोई भूत है!" नौकर चिल्लाते घर के भीतर भाग गया।

व्यापारी ने दिया ले जाकर कुएँ में झांका। देखता क्या है, कोई रस्सा पकड़कर कुएँ से ऊपर चढ़ रहा है। वह 'पारा' उर्फ़ अली था। व्यापारी क्रोध में आकर गरज उठा—"बदमाश, तुम कौन हो? मेरे कुएँ में क्यों उतर गये? लो तुमको मैं अभी राजभटों के हाथ सौंप देता हूं।"

'पारा' ने आपना चेहरा यों बनाया, मानों कोई भोला हो, तब उसने बड़ी अदब से कहा—"हुजूर! यह कौन-सा देश है? और कौन-सा गाँव है? मैं ईजिप्ट देश का निवासी हूं। नील नदी में नहाते मैं एक भँवर में फँस गया और नीचे की ओर चला गया। मैं कहाँ पहुंचा, खुद मुझे मालूम न था। बड़ी देर बाद में ऊपर तिर गया। ऊपर आकर देखता क्या हूं, यह आप का कुआँ है।" इस सफ़ेद झूठ पर व्यापारी ने यक़ीन किया।

"अरे, यह कैसे आश्चर्य की बात है? यह तो बगदाद शहर है! तुमने कहाँ डुबकी लगायी और कहाँ तिर गये? तुम्हें मैं अच्छे कपड़े दे देता हूं। आज रात को

गुलशन राय

सारा वृत्तांत सुनकर हसन ने मुस्कुराते हुए कहा--"बगदाद की किसी युवती ने यह काम किया है तो यह निश्चय ही दिलैला की बेटी जीनाब की ही करतूत होगी। यदि वह तुम्हारे हाथ लगे तो तुम क्या करोगे?" हसन ने अली से पूछा।

"मैं उसके साथ शादी करना चाहता हूं।" 'पारा' ने उत्तर दिया।

"उसने तो तुम्हारी फ़जीहत जो की है?" हसन ने आश्चर्य में आकर पूछा।

"इस से दुगुना ही सही, वह मेरी फ़जीहत कर बैठे तो भी मैं उसपर नाराज़ न होऊँगा। जीनाब को अपनी औरत बनाने की एक ही इच्छा है!" 'पारा' ने स्पष्ट शब्दों में कहा।

"अगर यही तुम्हारी प्रबल इच्छा हो, तो उसकी पूर्ति करनी ही चाहिये। तुम भी जीनाब जैसे सुंदर हो। तुम्हारी जोड़ी भी खूब फ़बेगी।" हसन ने कहा।

"हसन, तुम इसकी मदद करो न?" अहमद ने पूछा।

हसन ने थोड़ी देर तक सोचा, फिर 'पारा' को एक बढ़िया उपाय बताया।

'पारा' ने अपने सारे बदन में काला रंग पोत दिया। अब वह एक नीग्रो जैसे

यहीं पर खाना खाकर सो जाओ और कल तुम अपने देश को लौट जाओ।" व्यापारी ने समझाया।

दूसरे दिन सुबह जब तक 'पारा' अहमद के घर न पहुंचा, तब तक उसकी जान जान में न थी। अपने प्यारे चेले की चिंता में पड़कर उसने रात को खाना तक न खाया था और रात भर न सोया। सबेरा होते ही उसने अपने साथी कोत्वाल हसन को बुलवाकर उसकी सलाह माँगी।

हसन और अहमद बैठे बात कर ही रहे थे कि 'पारा' लौट आया। उसने अपना सारा अनुभव दोनों कोत्वालों को सुनाया।

दीख रहा था। नीग्रो की पोशाकें पहनी, थोड़े रुपये और भांग लेकर सब्ज़ी मण्डी की ओर चला। वहाँ पर दिलैला का रसोइया तरकारियाँ खरीदते उसे दिखाई पड़ा। 'पारा' ने उसके निकट जाकर कहा--"भाई साहब, मैं इस शहर के लिए एक दम नया आदमी हूँ। अपनी जात के तुम दिखाई पड़े। बड़ा अच्छा हुआ। चलो, शराब की दूकान में चलें। जी भरकर प्रेम से पियेंगे।"

"शराब की दूकान में बैठकर पीने की फ़ुरसत कहाँ मुझे? तुम्हीं हमारे घर क्यों नहीं चलते? तुम जो भी पीना चाहो, हमारे घर है। साथ ही मैं तुमको खाना भी खिलाऊँगा।" रसोइये ने बताया।

'पारा' भी तो यही चाहता था। वह रसोइये के साथ दिलैला के घर गया।

जल्द ही दिलैला और जीनाब खाने बैठे। रसोइये ने उनके लिए खाना और शराब तैयार किया। एक एक चीज़ ले आकर दस्तरखान पर सजाने लगा। जब रसोइया दस्तरखान की ओर गया तब 'पारा' ने शराब में भाँग मिला दिया।

थोड़ी देर में भाँग ने अपना असर दिखाया। दिलैला, जीनाब, चालीस नीग्रो गुलाम और रसोइया जहाँ के तहाँ नशे में

पड़े रहे। आखिर शिकारी कुत्ते में भी भांग के शिकार हुए।

'पारा' ने बड़ी फ़ुरसत से सारा घर छान डाला और दिलैला के धारण करनेवाली अधिकारी-पोशाकें, चाँदी के कबूतरवाली टोपी, नीग्रो लोगों के धारण करनेवाली लाल जरी की पोशाकें सब इकट्ठी कर एक गठरी बाँधी। तब छत पर जाकर घोंसलों से कबूतर निकाले और उनको एक बड़े पिंजड़े में बंद किया। इसके बाद एक चिट पर लिखा—"यह साहसी कार्य करनेवाला और कोई नहीं, बल्कि महा पराक्रमी 'पारा' उर्फ़ अली है।" उस चिट को वहीं छोड़, गठरी और पिंजड़े के साथ वह अहमद के घर चला गया।

संध्या के समय दिलैला होश में आयी। उसने उठकर अली का वह चिट देखा। जो चीजें चुराई गयी थीं, वे सब खलीफ़ा की संपत्ति थी।

दिलैला के सामने अब बड़ी जटिल समस्या पैदा हो गयी। चोरी का पता लग जाय तो उसकी नौकरी के साथ इज्जत भी जाती रहेगी। इसके बाद 'पारा' से बदला लेने पर भी कोई फ़ायदा न होगा। 'पारा' से यह काम करानेवाला अहमद ही होगा। अहमद से बदला लेने के लिए उसने अपनी बेटी के द्वारा 'पारा' उर्फ़ अली का अपमान कराया तो अहमद ने उसी 'पारा' के द्वारा उसका बदला लिया है। अब अहमद के पैर पकड़कर खोई हुई संपत्ति को वापस लाने के सिवाय दूसरा कोई चारा नहीं है। अहमद ने उसके साथ बदला लिया है, इसलिए वह उससे समझौता कर सकता है।

"अभी आ जाती हूँ।" अपनी बेटी मे कहकर दिलैला अहमद के घर गयी।

दिलैला जब अहमद के घर पहुँची, तब अहमद, हसन और 'पारा' खाने बैठे

थे। दिलैला को देखते ही अहमद और हसन खड़े हो गये और सर झुकाकर सलाम करके कहा–"तशरीफ़ लाइये। हमारे साथ खाना खाइये।" इज्जत के साथ उसका स्वागत किया।

दिलैला को ज्योंही मालूम हुआ कि उनके सामने कबूतरों का मांस परोसा गया है, त्यों ही दिलैला की आँखों के सामने अंधेरा छा गया और उसका सर चकरा गया।

दिलैला ने कांपते स्वर में कहा–"अहमद, तुम भले ही मुझ पर नाराज़ हो, लेकिन खलीफ़ा अपने प्राण के समान माननेवाले डाक के कबूतरों को चोरी से मंगवाकर खाना क्या मुनासिब है? चोरी करने का भी तो तरीक़ा होता है?"

हसन ने दिलैला को सांत्वना देते हुए कहा–"आप घबराइये नहीं। डाकवाले कबूतर बिलकुल हिफ़ाजत से हैं। खलीफ़ा की सारी संपत्ति सुरक्षित है। यह युवक अली एक इच्छा रखता है। यदि आप मान जायें तो इसी क्षण आपके कबूतर और पोशाकें लौटायी जायेंगी।"

"बताओ, उसकी क्या इच्छा है? मैं इस वक़्त इनकार करने की हालत में

नहीं हूँ, तुम लोग अच्छी तरह से जानते हो।" दिलैला ने जवाब दिया।

"वैसे कोई खास बात नहीं। यह अली आपकी बेटी जीनाब से शादी करना चाहता है।" हसन ने कहा।

"अरे बेटे, क्या तुम लोगों ने मुझे इसीलिए यह तक़लीफ़ दी? मेरे मान लेने से कोई फ़ायदा नहीं। मेरी जीनाब के संरक्षक उसका फूफ़ा याने मेरे बड़े भाई जुरेक़ है। तुम लोग अच्छी तरह से जानते हो, जुरेक़ बड़ा हठी है। उसको इस शादी के लिए मनवाने की जिम्मेदारी 'पारा' उर्फ़ अली को अपने ऊपर लेनी

करना छोड़, मछलियाँ भूनकर बेचता और अपने दिन गुज़ार देता था। लेकिन फिर भी उसकी वह चालाकी क़ायम थी।

अपनी दुकान में ग्राहकों को आकृष्ट करने के लिए जुरेक़ ने एक युक्ति सोची। उसने अपनी दूकान के द्वार पर एक हज़ार दीनारों से भरी एक थैली लटका दी। और उसने यह घोषणा की कि उस थैली को जो चालाकी से उठा ले सकता है, वही उस रक़म का मालिक है।

किसी भी उपाय से उस थैली को हड़पने के ख्याल से हज़ारों ग्राहक उस दूकान पर आते और भूनी मछलियाँ खरीदते। पर कोई भी उस थैली को हड़प न पाया। क्यों कि जो कोई भी उस थैली को छू लेता, तुरंत सारी दूकान में घंटियाँ बज उठतीं। घंटियों के बजते ही जुरेक़ दौड़कर आता और चोर को पकड़ लेता। या कभी कभी चोरी करनेवालों पर दूर से ही सीसे के गोले फेंक देता। इस प्रकार घायल हो हाथ-पैर तुड़वानेवाले भी बड़ी तादाद में हैं।

'पारा' उर्फ़ अली ने जुरेक़ के पास जाकर कहा—"मैं कोत्वाल अहमद के घर रहता हूँ। मैं आपकी भांजी जीनाब के

होगी। इसके सिवा दूसरा कोई उपाय नहीं है।" दिलैला ने कहा।

"ऐसी बात हो तो मैं जुरेक़ से मिलूंगा। उनको मनवा कर मैं जीनाब से शादी करूंगा।" 'पारा' ने कहा। दिलैला अपनी पोशाकें और कबूतर लेकर घर लौट गयी।

दिलैला का भाई एक समय एक नामी लुटेरा था। उस समय उसने जो चोरियाँ कीं, उनकी तलाश और इन्साफ़ तक न होता था। वह जहाँ भी बैठता, उसी जगह से हिले-डुले बिना जब, जहाँ, जो भी चोरी करना चाहता, कर बैठता। अब वह बूढ़ा हो चला था। चोरियाँ

साथ शादी करना चाहता हूँ। इसलिए आपकी अनुमति मांगने आया हूँ।"

जुरेक़ ने कहा—"मैं कभी तुमको जीनाब के साथ शादी करने की इजाज़त नहीं दे सकता। तुम जीनाब के लायक़ न हो।"

'पारा' ने सोचा कि जुरेक़ की दूकान पर लटकनेवाली दीनारों की थैली को हड़प ले तो यह बूढ़ा जीनाब के साथ शादी करने की मुझे अनुमति देगा और उसने उस थैली को हड़पने का उसी समय निश्चय किया।

यह निश्चय कर 'पारा' ने एक गाभिन का वेष बनाया और दूसरे दिन जुरेक़ की दूकान पर आ पहुँचा। उसने मछलियों का सौदा करते हुए ऐसा अभिनय किया कि मानों प्रसव-पीड़ा शुरु हो गयी हो। यह देख जुरेक़ अपनी औरत को बुला लाने घबराये हुए घर के भीतर दौड़ पड़ा।

जुरेक़ के भीतर जाते ही 'पारा' ने झट दीनारों की थैली पकड़ ली। उसके हाथ के लगते ही सारी दूकान में घंटियाँ बज उठीं। तुरंत जुरेक़ दूकान में लौट आया। थैली को छोड़ भागनेवाले 'पारा' उर्फ़ अली को देख उस पर जोर से सीसे का एक गोला फेंक दिया।

सीसे के गोले की चोट खाकर वह गली में ढ़ेर-सा हो गया। वह जल्दी उठ बैठा। लंगड़ाते-अहमद के घर जा पहुँचा।

इस घटना को अपनी आँखों से देखनेवाले लोगों ने तरह-तरह से जुरेक़ को गालियाँ देते हुए कहा—"तुम आदमी हो या शैतान? पाप की गठरी लटकाये सबको लोभ में डाल रहे हो और उल्टे एक गाभिन पर सीसे का गोला फेंकते हो?" जुरेक़ ने बड़ी लापरवाही से जवाब दिया—"ऐसे कोरे उपदेश मैंने काफ़ी सुन रखे हैं।"

चोट खाकर भी अली ने अपना विचार नहीं बदला। चोट के चंगा होते ही वह फिर जुरेक़ की दूकान की ओर चल पड़ा। वह जुरेक़ के हाथों में जान देने के लिए भी तैयार हो गया, पर जीनाब के साथ शादी करने का प्रयत्न न छोड़ा।

इस बार 'पारा' एक नौकर का वेश धरकर हाथ में एक थैली ले जुरेक़ की दूकान पर आया और पूछा—"ज़रा गरम-गरम मछलियाँ दिला दीजिये।"

"गरम-गरम चाहते हो तो चूल्हे के जलाने तक ठहर जाओ।" यह जवाब देकर जुरेक़ घर के अन्दर चला गया।

तुरंत 'पारा' ने दीनारों की थैली पकड़ ली। दूकान में घंटियाँ झनझना उठीं।

जुरेक़ एक ही छलांग में दूकान में कूद पड़ा—"अरे बदमाश! क्या मैं तुम्हारे इस प्रच्छन्न वेश को पहचान नहीं पाता हूँ?" यह कहकर उसने सीसे का गोला उसके सर पर निशानी लगा ज़ोर से फेंका।

'पारा' हठात् झुक गया। जुरेक़ का गोला सड़क पर चलनेवाले एक आदमी के सर पर स्थित दही के बर्तन से जा लगा। बर्तन फूट गया और सारा दही छितर गया। वह दही एक काज़ी के चेहरे और दाढ़ी पर जा गिरा।

इस दृश्य को देखनेवालों ने जुरेक़ को डांटा—"ठहरो बे, ये काज़ी साहब तुम्हारे इस पाप की कमाई का ब्याज सहित वसूल करेंगे।" (और है)

भूतों का बखेड़ा

एक गाँव में माँ-बेटी थी। वे बहुत ही गरीब थीं। इसलिए एक छोटी-सी झोंपड़ी में रहा करती थीं। उन्हें कोई निश्चित आमदनी न थी, इसलिए माँ कोई न कोई मजदूरी करके चार पैसे लाती, उसीसे वे दोनों अपने पेट पालतीं। मगर वे एक भी पैसा बचा न पाती थीं।

कुछ दिन जैसे-तैसे कट गये। एक बार माँ बीमार पड़ गयी। माँ की जिम्मेदारी बेटी पर आ पड़ी। बेटी का नाम गौरी था। गौरी बड़ी होशियार लड़की थी। वह घर का काम संभालती थी, मगर अब उसे मजदूरी की खोज में बाहर जाना पड़ा।

इसलिए गौरी गाँव के पास के जंगल में जाती, सूखी लकड़ियाँ बीनकर बेच देती, उसी से अपने दिन चला लेती।

उस जंगल में दो भूत थे। उन भूतों को अपनी जिंदगी पर घृणा होने लगी। इसलिए उनका यह विश्वास था कि अच्छे लोगों की मदद करने पर उनका जन्म जाता रहेगा।

यह सोचकर एक दिन बड़े भूत ने छोटे भूत से कहा—"इस जंगल के पार एक बगीचे में एक छोटी लड़की आकर जलावन इकट्ठा कर रही है। मैं उस लड़की की मदद करके इस जन्म से मुक्ति पाऊँगा।"

"ऐसा ही करो, तुमको मुक्ति मिल जायगी तो मैं भी वही काम करूँगा।" छोटे भूत ने कहा।

बड़ा भूत बगीचे में गया। गौरी के आने के पहले ही वहाँ की सूखी लकड़ियों को इकट्ठा कर एक ढेर बना दिया। गौरी ने उस ढेर को देखा और मन में सोचा—"आज मुझसे पहिले ही कोई आकर सारी लकड़ियाँ बीन चुका है।" यह सोचकर वह और बगीचों में गयी, पर कहीं एक भी

सूखी लकड़ी न मिली। इसलिए वह निराश हो खाली हाथ घर लौट आयी।

वह दिन बेकार चला गया। गौरी ने सोचा कि अब लकड़ी बीन कर पैसे कमाना मुश्किल है। क्योंकि कोई उससे पहले आकर लकड़ियाँ बीन रहा है। घने जंगल में जाने से उसे लकड़ियाँ मिल सकती हैं, मगर उसकी हिम्मत न हुई। गौरी यह सोचकर सारे गाँव में घूमने लगी कि शायद कोई और काम मिल जाय। उसने देखा कि एक घर के सामने चबूतरे पर बैठी एक बूढ़ी फूलों की माला गूंथ रही है। पास में एक टोकरी में बहुत से फूल हैं। गौरी ने देखा कि बूढ़ी की उंगलियाँ ठीक न होने की वजह से माला गूँथने में बड़ी परेशानी का अनुभव कर रही है।

"नानीजी! तुम क्यों इतनी मेहनत उठाती हो? मैं मालाएँ गूँथ देती हूँ। तुम जो कुछ अपने मन से देना चाहो, मुझे दो।" गौरी ने कहा।

"क्या करूँ बेटी? यही मेरा पेशा है। मेरी उंगलियाँ साथ नहीं देतीं। तुम मालाएँ गूँथ सकती हो, तो गूँथ लो। इन्हें दूकान में ले जाकर बेच आओ, जो पैसे मिलेंगे, उनमें तुम को चौथा हिस्सा दे दूँगी।" बूढ़ी ने कहा।

बूढ़ी गौरी को चबूतरे पर बिठा कर वह घर का काम देखने भीतर चली गयी।

पिछले दिन भूत ने गौरी की मदद करने का व्यर्थ प्रयत्न किया था। उसने आज फिर उसकी मदद करने का निश्चय किया। गौरी टोकरी में से ज्यों-ज्यों एक एक फूल निकालती, त्यों-त्यों भूत उस टोकरी में एक एक फूल डालता गया।

थोड़ी देर बाद बूढ़ी ने बाहर आकर गौरी से पूछा—"बेटी, बड़ी देर हो गयी, फिर भी माला गूँथने का काम पूरा न

हुआ? टोकरी-भर फूल कैसे रह गये? अब तक तुम क्या कर रही थी?"

"देखो नानीजी, मैंने कितनी बड़ी माला गूँथी है।" ये शब्द कहते गौरी ने एक लंबी माला बूढ़ी को दिखायी।

पर दूसरे ही क्षण बूढ़ी ने टोकरी की ओर देख कहा-"अरे, सारे फूल वैसे ही रह गये हैं। यह तो कोई भूतों की टोकरी मालूम होती है। तुम भी कोई भूत जैसी दीखती हो? कौन हो तुम? जो मदद की, बस, काफ़ी है। अब चली आओ।" ये शब्द कहते बूढ़ी ने फूलों की वह माला और टोकरी दूर फेंक दी।

इस तरह बड़े भूत ने गौरी की मदद करने का जो प्रयत्न किया, वह भी बेकार चला गया।

दूसरे दिन से गौरी घर पर रहकर मिट्टी के खिलौने बना कर अपना गुज़ारा करने लगी। उसका बाप जब जीवित था, तब वह मिट्टी के खिलौने बना कर बेचा करता था। उस वक्त गौरी ने भी खिलौने बनाना सीख लिया था। इसलिए वह काली मिट्टी ले आयी, उसे भिगो कर अपने घर के आंगन में रख दिया।

इस बार छोटे भूत ने गौरी की मदद करनी चाही। वह तोते के रूप में

जमीन्दार के घर गयी, वहाँ से एक हीरा चुरा लाया और उसे उस गीली मिट्टी में डाल दिया। गौरी खिलौने के साँचों में से हाथी का साँचा लाने भीतर गयी। इसी बीच भूत मिट्टी में हीरा डाल गया।

गौरी ने ध्यान न दिया कि उस मिट्टी में हीरा है। उस मिट्टी से गौरी ने हाथी की मूर्ति बनायी, उसे साँचे से निकाल कर धूप में सुखायी। दूसरे दिन सवेरे उस पर रंग सजा कर फिर सुखायी। तीसरे दिन उस हाथी की मूर्ति को ले वह जमीन्दार के घर पहुँची।

जमीन्दार के बच्चों ने हाथी की उस मूर्ति को खरीदवाने का हठ किया। जमीन्दार ने उसे खरीद कर गौरी के हाथ में एक रुपया दिया। तब तक हीरे के खो जाने का समाचार जमीन्दार को मिल गया। वह बड़ा परेशान था। पर चोर का पता न लगा था। सब नौकरों की तलाशी ली गयी। सारा घर ढूंढ़ा गया, मगर हीरा नहीं मिला। खोज जारी ही थी।

इस बीच हुआ क्या, जमीन्दार के बच्चे हाथी की मूर्ति को ले खेल रहे थे। भूल से वह किसी के हाथ से गिर कर टूट गयी। उन टूटे टुकड़ों में से खोया हुआ हीरा मिल गया।

जमीन्दार ने गौरी को बुलवा कर उसे चोर ठहराना चाहा, लेकिन आखिर यह साबित हुआ कि गौरी दो दिन से घर के बाहर नहीं गयी। इस पर प्रसन्न हो जमीन्दार ने गौरी को बढ़िया इनाम देकर भेज दिया।

उस दिन से गौरी ने मूर्तियाँ बनाने में निपुणता प्राप्त की और इस तरह माँ-बेटी आराम से अपने दिन काटने लगी।

लेकिन जंगल में रहने वाले दोनों भूतों को भूतों के जन्म से मुक्ति नहीं मिली

लाड़-प्यार

एक गाँव में एक किसान था। उसके तीन बेटियाँ थीं। किसान दंपति ने उन लड़कियों को बड़े ही लाड़-प्यार से पाला-पोसा और बड़ा किया। आखिर तीनों की एक साथ शादी करके अपने अपने ससुराल भेज दिया।

मगर दूसरे ही दिन सवेरे बड़ी लड़की रोते हुए मायके लौट आयी। माँ-बाप ने उसे समझा-बुझाकर रोने का कारण पूछा।

"कल शाम को मैं अपने पति के साथ एक सहिजन के पेड़ के नीचे बैठकर बात कर रही थी। तभी जोर की हवा चली और एक फूल मेरे पैर पर आ गिरा। इसे देख कर भी मेरे पति ने यह नहीं पूछा कि 'तुम्हें चोट तो न लगी?' ऐसे लापरवाह पति के साथ मैं गृहस्थी कैसे चला सकती हूँ? इसलिए अपने घर वापस चली आयी।" बड़ी बेटी ने अपनी कहानी सुनायी।

दुपहर के होते-होते दूसरी बेटी भी मुँह बनाये मायके आ धमकी।

"क्यों बेटी? क्या बात है? कैसे तुम लौट आयी?" माता-पिता ने पूछा।

"सुनो तो माँ! आज सवेरे मैं दही मथ कर मक्खन निकाल रही थी। तभी मक्खन का पिंड मेरे पैर पर गिर पड़ा। मेरा पति वहीं पर था, मगर उसने यह नहीं पूछा–'प्यारी, क्या तेरे पैर में चोट तो नहीं आयी?' ऐसे निर्दयी पति के साथ मैं कैसे जिंदगी भर गृहस्थी चला सकती हूँ। इसलिए घर लौट आयी।" दूसरी बेटी ने समझाया।

शाम तक तीसरी बेटी भी आग उगलते गठरी ले मायके आ पहुँची।

"तुम भी लौट आयी हो, बेटी? तुम्हें कौन तकलीफ़ हुई?" माता-पिता ने पूछा।

श्यामसुंदर वर्मा

"मेरा पति कैसा क्रूर है, आप क्या जानते हैं? कहता है, खाने के बाद पान की सींकें निकाल कर बीड़ा बनाकर उसे खिलाना है, पान की सींक निकालते वक़्त क्या मेरे हाथ छिल न जायेंगे? यह बात भी वह नहीं जानता।" तीसरी ने कहा।

माता-पिता को कुछ न सूझा कि इन बेटियों को लेकर क्या करें? उन दोनों ने समझ लिया कि हद से ज्यादा लाड़-प्यार दिखाकर उन्हीं ने उन लड़कियों को बिगाड़ दिया है। मगर यह बात सब पर प्रकट हो जायगी तो उनकी ही निंदा करेंगे।

माता ने सोचा कि इन बेटियों को कैसे फिर अपने पतियों के घर भेजें। सोच-समझकर आखिर वह एक निर्णय पर पहुँची। रात को सबको खाना परोस कर अंत में वह खाने बैठी। जो कुछ खाना बचा था, सारा का सारा खा डाला। हाथ-मुँह धोकर रोते हुए एक कोने में जा बैठी।

बेटियों ने देखा कि एक कोने में बैठी माँ रो रही है। उसके निकट जाकर पूछा–"माँ! क्या हुआ? रोती क्यों हो?"

"बेटियो, तुम से क्या बताऊँ, मेरी तकलीफ़ों का कोई अंत नहीं। इन्हें दूर करनेवाला कौन है?" माँ ने बताया।

"माँ, तुम हम से न बताओगी तो और किससे बताओगी? क्या हुआ! कहो तो सही?" बेटियों ने माँ पर ज़ोर डाला।

"सुनो बेटियो! क्या मैंने खाना खाया? सारा खाना चुक गया है। तुम्हारे पिता ने मुझ से यह न पूछा—'ओह, तुमने भरपेट खाना खाया? दुबारा परोस कर खाया है कि नहीं?' ऐसे मर्द के साथ मैंने इतने साल गृहस्थी चलायी। दूसरी औरत होती तो कभी की भाग जाती। अब मुझ से नहीं बनता। तुम लोग भी अपनी-अपनी गृहस्थी छोड़ लौट आयी हों। चलो, हम सब कहीं जाकर आराम से जियेंगी। जल्दी निकलो।" माँ ने कहा।

माँ की बातें बेटियों को अतिशयोक्ति सी लगीं।

"माँ, तुम भी कैसी विचित्र बातें करती हो? बस, इतनी छोटी-सी बात को लेकर कोई अपना घर छोड़ परायी जगह जावेगी?" बेटियों ने आश्चर्य में आकर पूछा।

"अरी, मेरी बात को तुम्हीं लोग अचरज की बताती हों! मुझे आश्चर्य होता है। क्या सहिजन का फूल गिरने से पैर में चोट लगना, मक्खन का पिंड पैर पर गिरने से घाव का होना, पान की सींकों को निकालते वक़्त हाथ का छिल जाना ये सब विचित्र बातें नहीं हैं? इन्हीं बहानों पर तुम तीनों अपने अपने पतियों को छोड़ मायके लौट नहीं आयी हों। दिन-भर बेगारी करनेवाली पत्नी ने भरपेट खाया है कि नहीं, इसका पता न लगानेवाले पति को मैं छोड़ना चाहूँ तो तुमको विचित्र मालूम होता है?" माँ ने अपनी बेटियों से पूछा।

माँ की बातें बेटियों के दिल को लग गयीं। तीनों मौन हो गयीं। दूसरे दिन सवेरे तीनों बेटियाँ अपने अपने पति के घर चल पड़ीं।

चक्रव्याज

एक गाँव में एक व्यापारी था। वह गरीबों को रुपया या अठन्नी उधार देकर एक महीने में उसके दुगुनी रक़म चक्र-व्याज लिया करता था।

एक दिन एक ग्राहक उसकी दूकान पर आया और पूछा–"सेठ साहब, तुम सिर्फ चक्र-व्याज लेते ही हो या देते भी हो?"

"यह तुम क्या कहते हो, भाई! जब मुझे लेना होता है तो लेता हूँ, देना हो तो देता भी हूँ।" व्यापारी ने जवाब दिया।

ग्राहक ने कई चीजें खरीदीं और रुपये चुकाये।

"भाई साहब, सुनो, मुझे तुमको अधन्नी देनी है। याद रखो।" व्यापारी ने कहा।

"कभी व्याज सहित दे दो, अभी कोई जल्दी नहीं।" यह कहते ग्राहक चला गया।

दो साल बीत गये। उस पुराने ग्राहक ने आकर व्यापारी से पूछा–"सेठ साहब, क्या मेरा कर्ज चुकाओगे? भूल तो नहीं गये हो न? दो साल पहले मेरी अधन्नी तुम्हारे पास रह गयी है।"

व्यापारी एक रुपया निकाल कर ग्राहक के हाथ देने लगा।

"सेठ साहब, ठीक से हिसाब करो। हर मास मेरे पैसे दुगुने होते जायेंगे। इसी तरह दो साल का हिसाब जोड़ो।" ग्राहक ने कहा।

हिसाब लगाने पर व्यापारी के पास ग्राहक के दो लाख बासठ हज़ार एक सौ चवालीस रुपये निकले।

पर ग्राहक ने इस शर्त पर उस धन को न लिया कि व्यापारी आइंदा व्याज का व्यापार छोड़ दे।

अग्निहोत्र के मुंह से उसकी बीमारी का समाचार सुनकर ब्रह्मा ने पल-भर सोचा और कहा–"नर और नारायण अर्जुन और कृष्ण के रूप में इस पृथ्वी पर अवतरित हुए हैं। वे खांडववन के निकट आयेंगे। उस समय का पता लगाकर तुम उनकी सहायता मांगो। यदि उनकी सहायता तुमको मिली तो इन्द्र ही नहीं बल्कि सारे देवताओं के सामना करने पर भी तुम्हारा काम बेरोकटोक संपन्न होगा।"

इसी लिए आज अग्निहोत्र कृष्ण और अर्जुन से सहायता मांगने आया है।

अग्निहोत्र का निवेदन सुनकर अर्जुन ने कहा–"मैं जानता हूँ कि इंद्र आदि देवताओं के साथ किन अस्त्रों से युद्ध करना है, किंतु इस समय मेरे पास एक बढ़िया धनुष, अच्छे घोड़ों से जुता रथ नहीं हैं। यदि तुम मेरे तथा कृष्ण के लिए आवश्यक आयुध तथा हमें ले जा सकनेवाला रथ ला दोगे तो मैं तुम्हारी इच्छा की पूर्ति अवश्य करूंगा।"

अग्निहोत्र ने वरुण का स्मरण किया। वरुण प्रत्यक्ष हो गया। अग्नि ने वरुण से बिनती की–"महानुभाव! चन्द्र ने आपको गांडीव नामक धनुष, अक्षय तूणीर, कपिध्वजवाला रथ जो दिये थे, वे आपके पास ही हैं। उनकी मुझे जरूरत आ पड़ी है। कृपया उधार में दे दीजिये।"

वरुण अग्निहोत्र को वे सारे आयुध देकर अंतर्धान हो गया। अग्निहोत्र ने उन
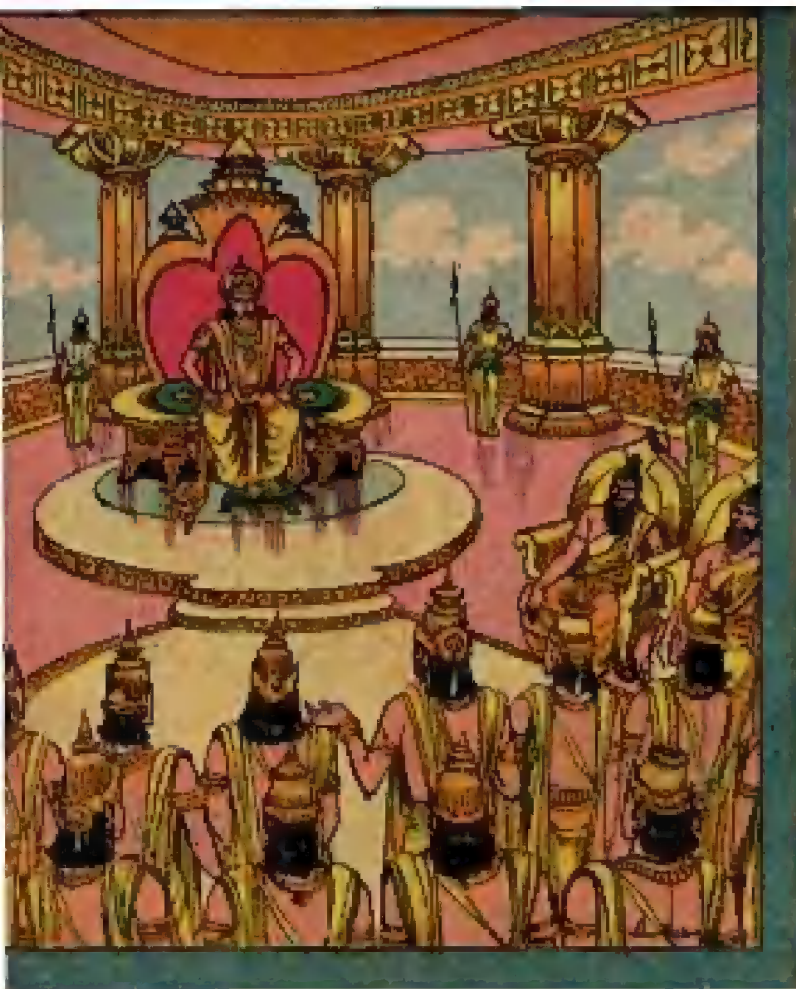
आयुधों को कृष्ण और अर्जुन को सौंप दिये। कृष्ण ने चक्र ले लिया, गांडीव और अक्षय तूणीरों को अर्जुन ने लिया। गांड़ीव साधारण धनुष नहीं था। वह एक लाख आयुधों के बराबर था। उस रथ और तूणीरों का निर्माण प्राचीन काल में विश्वकर्म ने किया था। देव और असुरों के युद्ध में चन्द्र ने उन आयुधों का उपयोग किया था।

कृष्ण ने जो चक्र लिया, वह शत्रु को मारकर लौट आनेवाला था। वरुण ने अंतर्धान होने के पहले कृष्ण को स्वयं कौमोदकी नामक गदा दे दिया।

आयुध ग्रहण कर कृष्ण और अर्जुन ने कहा–"हे अग्निदेव! अब तुम खांडव वन का दहन करना शुरू कर दो। चाहे इंद्र भी क्यों न आये, हमारी कुछ हानि नहीं कर सकेंगे।"

अग्निहोत्र का उत्साह उमड़ पड़ा। वह खांडववन में प्रवेश करके वहाँ के महा वृक्षों, लताओं, औषधियों तथा वनस्पतियों को जलाने लगा। उस दावानल में झुलस कर जंगल के सभी प्रकार के प्राणी बाहर की ओर भागने लगे, तब कृष्णार्जुन ने उनको रोककर आग में जलने दिया। आसमान में उड़ने का जो पक्षी प्रयत्न करने लगे, वे सब आग से झुलस कर उन्हीं ज्वालाओं में गिरकर जल गये।

खांडववन इस तरह जलने लगा, मानों प्रलय मच गया हो। उसके ताप से डरकर देवता सब इन्द्र के पास दौड़े गये, और कहने लगे कि सारे लोक खाक होते जा रहे हैं। इस पर इन्द्र ने पर्जन्य को आज्ञा दी कि वह खांडववन पर भारी वर्षा कर दे।

जोर की वर्षा हुई, पर वह सारा पानी भाप बनता गया, मगर आग को बुझा न सका। इसे देख इन्द्र को क्रोध आया।

उसने सारे मेघों को आज्ञा दे दी कि एक साथ सब मिलकर भारी वर्षा कर दे जिससे आग बुझ जाय।

अर्जुन ने अपने बाणों से खांडववन पर ही नहीं बल्कि उसके चारों तरफ़ बहुत दूर तक बाणों से पंडाल इस तरह बनाया कि पानी की एक बूंद भी उसपर न गिर सके। इससे खांडववन वर्षा से बिलकुल सुरक्षित रह पाया।

खांडववन के रक्षक तक्षक को यह मालूम हो गया कि अग्निहोत्र कृष्णार्जुनों की मदद से खांडववन को पूर्ण रूप से जला डालेगा, तब वह उस वन को छोड़ कुरुक्षेत्र में जा पहुँचा।

तक्षक का पुत्र अश्वसेन अपनी माता की आड़ में वन को छोड़ चला जा रहा था, अर्जुन की दृष्टि उन पर पड़ी, तब अर्जुन ने अश्वसेन की माँ के सर तथा अश्वसेन की पूँछ को अपने बाणों से काट दिया। पूँछ के कट जाने पर भी अश्वसेन प्राणों के साथ भाग निकला।

इसके बाद इन्द्र और अर्जुन के बीच भयंकर युद्ध हुआ। मगर इंद्र अर्जुन को जीत न पाया। खांडववन में रहनेवाले कुछ राक्षस कृष्ण से युद्ध करने आये, कृष्ण

नें अपने चक्र से उनको मार डाला। मय नामक एक राक्षस बचकर भाग रहा था। कृष्ण उसे भी मारने दौड़े, पर मय ने अर्जुन की शरण ली।

अग्निहोत्र ने खांडववन को पंद्रह दिन तक जलाया। वन के प्राणी भी वन के साथ जल मरे। उसमें जलने से बचनेवाले हैं– तक्षक, उसका पुत्र अश्वसेन, मय तथा शारंङ्ग के चार पुत्र!

ये शारंङ्ग पुत्र मंदपाल नामक मुनि की संतान हैं। मंदपाल ने ब्रह्मचर्य व्रत का पालन कर बहुत समय तक तपस्या की और अपने योग की शक्ति के द्वारा स्वर्ग

नामक मादा पक्षी के द्वारा चार पुत्रों का जन्म दिया। इसके बाद वह अपने आश्रम को लौट गया, वहाँ पर लपिता नामक अपनी पहली पत्नी के साथ गृहस्थी चलाने लगा।

उन्हीं दिनों में एक दिन मंदपाल को खांडववन का दहन करने जानेवाला अग्निहोत्र दिखाई दिया। मंदपाल ने अपनी शक्ति के द्वारा अग्निहोत्र का उद्देश्य जानकर उससे बिनती की–"अग्निहोत्र, खांडववन में मेरे चार पुत्र हैं। उनकी रक्षा करो। इस बात का ख्याल रखो कि उन्हें किसी प्रकार की तक़लीफ़ न होने पावे।" अग्निहोत्र ने मान लिया। इसी कारण से शारङ्ग-पुत्र चारों प्राणों से बच गये।

खांडववन पूर्ण रूप से जल गया। अग्निहोत्र की बदहज़मी की बीमारी जाती रही। वह अपने मददगार कृष्ण और अर्जुन को आशीर्वाद दे अपने रास्ते चला गया।

इंद्र भी कृष्ण और अर्जुन की शक्ति एवं सामर्थ्यों पर प्रसन्न हो देवताओं के साथ उनके सामने प्रत्यक्ष हुआ। कृष्णार्जुन ने इन्द्र को नमस्कार किया। इन्द्र के

चला गया। पर उसे स्वर्ग में भी सुख प्राप्त न हुआ। मंदपाल ने वहाँ के देवताओं से पूछा–"समस्त प्रकार के सुख देनेवाला स्वर्ग मुझे सुखदायक क्यों नहीं मालूम होता?"

देवताओं ने उसे समझाया–"तुमने तपस्या करके देवताओं का ऋण तो चुकाया, पर संतान प्राप्त करके पितरों का ऋण नहीं चुकाया। इसीलिए तुमको इस स्वर्ग में सुख नहीं मिला है।"

तब मंदपाल ने सोचा कि पक्षियों में जल्दी संतान की प्राप्ति होती है। इसलिए उसने शारंङ्ग पक्षी का रूप धरकर जरिता
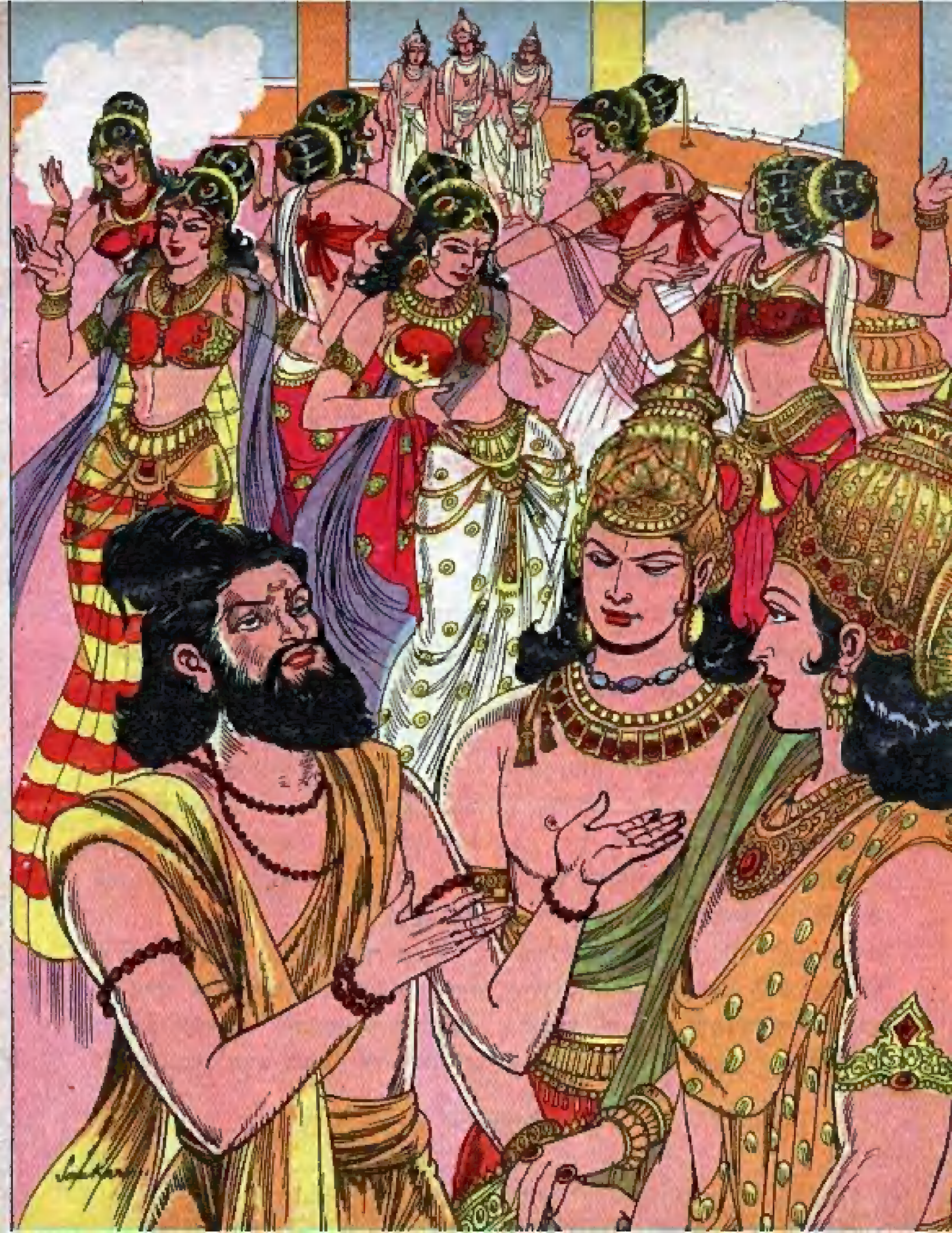
पूछने पर अर्जुन ने दिव्यास्त्र माँगे। इस पर इन्द्र ने अर्जुन से कहा–

"जब तुम्हारे सामने ईश्वर प्रत्यक्ष होगा, तब मैं तुम्हें दिव्यास्त्र दूंगा।" इसके बाद कृष्णार्जुन की मैत्री शाश्वत बने रहने का आशीर्वाद दे इन्द्र देवताओं के साथ देवलोक को चला गया।

इसके बाद कृष्णार्जुन यमुना के तट पर अपने विहार-स्थल को चले गये। उनके साथ मय भी चला आया। मय ने अर्जुन को प्रणाम करके कहा–"महानुभाव, आपकी कृपा से मैं खांडववन में जलने से बच रहा। कृष्ण अथवा अग्निहोत्र मुझे जलाने में संकोच न कर रहे थे। आपने मेरा बड़ा उपकार किया। मैं इस जिंदगी भर भूल नहीं सकता। लेकिन मैं इस उपकार का बदला कैसे चुकाऊं? मैं राक्षसों का विश्वकर्म हूं। इसलिए आप जिस निर्माण का आदेश देंगे, उसका निर्माण करके बिदा लेना चाहता हूं। आप किसी ऐसे निर्माण की कामना कीजिये, जिससे हम दोनों को तृप्ति मिले। आप अपनी इच्छा बताने की कृपा करें।"

अर्जुन ने कहा–"हमारे लिए कुछ नहीं चाहिए। तुम्हारी मैत्री ही संतोष का कारण है हमारे लिए।" मगर मय ने किसी सुंदर निर्माण करने का हठ किया। इसलिए कृष्ण ने अर्जुन को सलाह दी।

कृष्ण ने सोचते हुए मय से कहा–"युधिष्ठिर के लिए तुम एक अपूर्व सभा-भवन का निर्माण करके दो। वह अत्यंत सुंदर और दिव्य प्रभाव रखनेवाला हो। साथ ही सारा जगत उस पर गर्व कर सके।"

मय ने मान लिया। कृष्णार्जुन मय के साथ इंद्रप्रस्थ लौट आये और युधिष्ठिर को खांडव-दहन का सारा समाचार सुनाया। युधिष्ठिर यह जानकर बहुत प्रसन्न हुए कि

अर्जुन ने मय को अग्नि में जलने से कैसे बचाया और उसके बदले में मय ने कैसे सभा-भवन का निर्माण करके देने का वचन दिया। तदनंतर युधिष्ठिर ने मय का उचित सत्कार किया।

कुछ दिन बाद एक शुभ समय में मय ने मंगल-स्नान किया, ब्राह्मणों को भोज दिया। हर दिशा में दस हज़ार लोगों के बैठने योग्य एक चौकोर प्रदेश में सभा-भवन के निर्माण का प्रारंभ किया। उसी समय कृष्ण द्वारका के लिए रवाना हुआ। अर्जुन जिस रथ से इंद्रप्रस्थ आया था, उसी रथ से कृष्ण द्वारका को लौटा। पांडवों ने बड़ी दूर तक साथ चलकर विदा किया।

बहुत ही कम समय में मय ने सभा-भवन का निर्माण पूरा किया। मय ने एक समय वृषपर्व नामक राक्षस राजा के लिए सभा-भवन निर्माण करने का संकल्प करके बिंदु सरोवर के तट पर विविध प्रकार के मणिमय पदार्थ छिपा रखे थे। उन्हीं पदार्थों का मय ने उस सभा भवन के निर्माण में उपयोग किया। वहीं पर वृषपर्व ने अपने असाधारण गदा को भी छिपा रखा था। वहाँ की सामग्री में वरुण का शंख देवदत्त भी था। मय ने वह गदा भीम को तथा शंख अर्जुन को ला दिया।
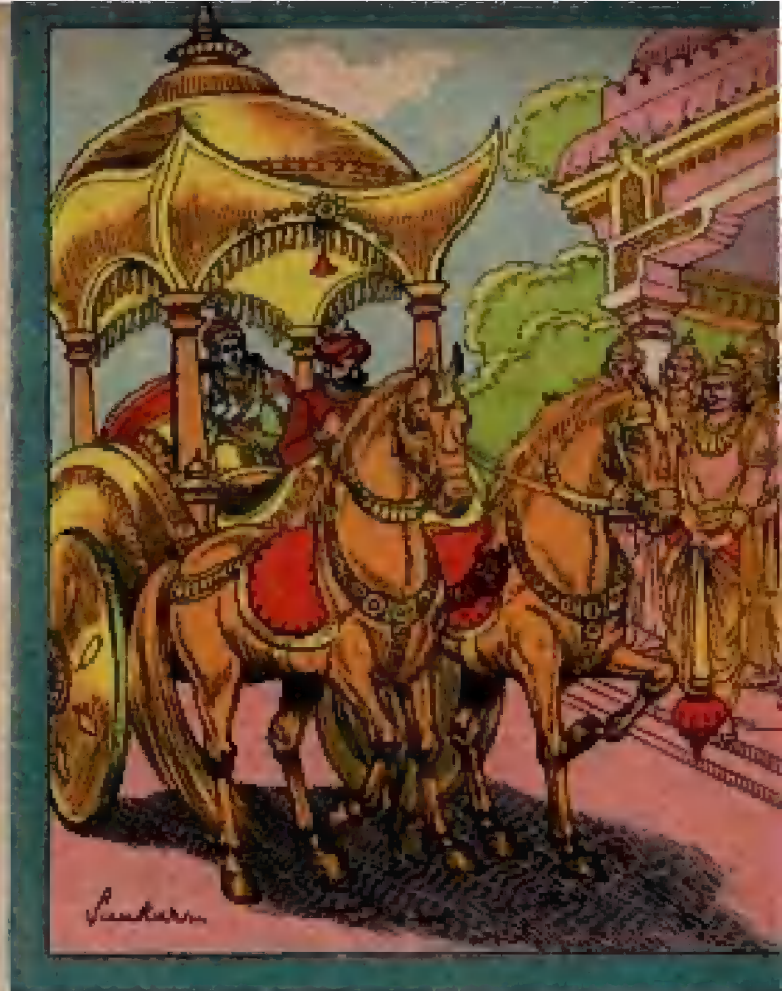
मय ने जिस ढंग से सभा भवन तैयार किया था, वह अद्भुत है। उसमें मय ने कुछ सरोवर बनाये। उनकी दीवारों पर रत्न, पत्रों में वैढूर्य, सीढ़ियों पर स्फटिक बिठा दिये। सोने से तैयार किये गये कमल, कछुए तथा मछलियों का भी प्रबंध किया। फ़र्श को इस खूबी से तैयार किया कि थल और जल में कोई फरक दीखता न था। सभाभवन में सर्वत्र धरनों, खंभों, दीवारों तथा चबूतरों पर मणियाँ बिठायीं। उसमें इतने प्रकार के आकर्षण थे कि

देखनेवाले भ्रम में पड़ जाते थे और आश्चर्यचकित हो ताकते रह जाते थे।

यह लोकोत्तर सभा-भवन बनाकर देने वाले मय का युधिष्ठिर ने उचित रूप में सम्मान किया। इसके बाद दस हज़ार ब्राह्मणों को भोज, दान एवं उपहार देकर उनके आशीर्वाद पाये, तब अपने भाइयों के साथ मय-सभा में प्रवेश किया।

अनेक देशों के राजाओं ने युधिष्ठिर के महत्व को स्वीकार किया और उन्हें घोड़े, सोने के आभूषण, रत्न, सुंदर नारियों तथा दास-दासियों को भेंट किया। इस प्रकार उपहार लानेवालों में अंग, वंग, कलिंग, आन्ध्र, पुंड्रक, किरात, मगध, मत्स्य, मालव, केकय, करूश, कांभोज, मद्र और पांड्य देशों के राजा भी थे।

इसी प्रकार अनेक प्रसिद्ध ऋषियों ने युधिष्ठिर के सभा-भवन में प्रवेश कर कथा-कहानियाँ सुनायीं। उस समय नारद भी पारिजात, रैवत इत्यादि अपने शिष्यों के साथ उस सभा में आया। युधिष्ठिर ने श्रद्धा के साथ नारद को अर्घ्य, पाद्य, आसन, मधुपर्क इत्यादि देकर उसका सत्कार किया।

नारद ने युधिष्ठिर से राजा के कर्तव्यों तथा कार्यों की चर्चा की, दिक्पालों की सभाओं का वर्णन करके सुनाया। यह भी बताया कि राजसूय याग करनेवालों को स्वर्ग की प्राप्ति होती है। हरिश्चन्द्र जैसे राजाओं ने राजसूययाग करने के कारण ही इन्द्रलोक को पाया। साथ ही उसने यह चेतावनी भी दी कि राजसूय-याग निर्विघ्न संपन्न करने पर अपार जनता का नाश करनेवाला युद्ध भी होगा।

यह चेतावनी दे नारद ने कहा—" राजन्, भली भाँति सोच-समझकर तुम को जो उचित लगे, वही करो।" इसके बाद नारद युधिष्ठिर से आज्ञा लेकर अपने शिष्यों के साथ द्वारका चला गया।
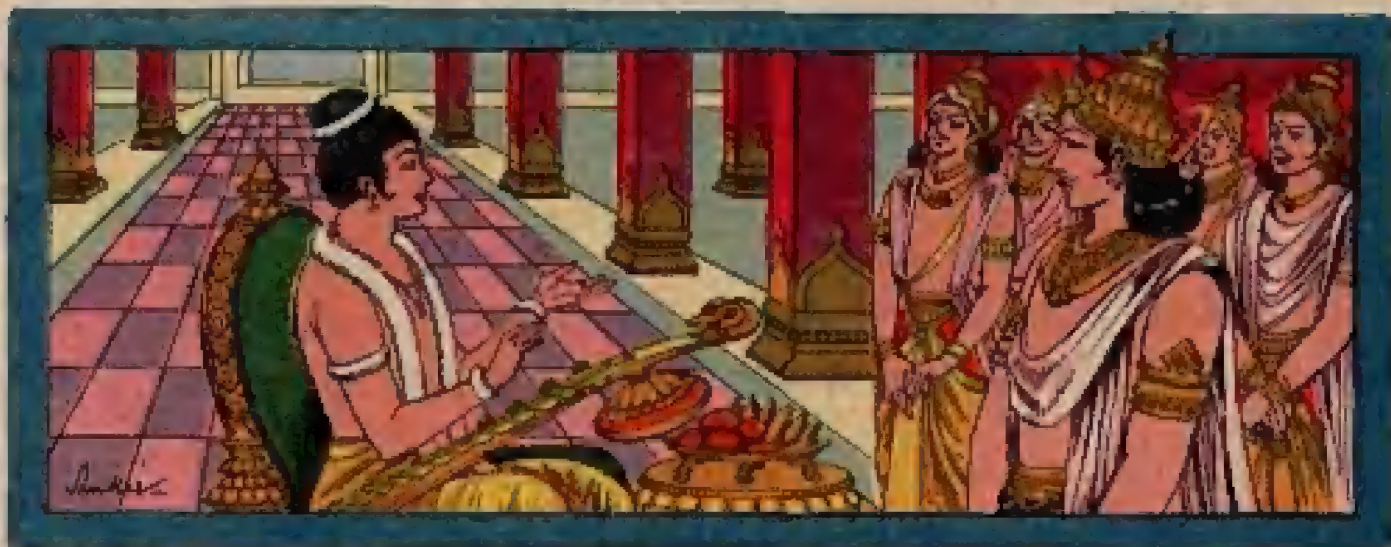
बस्रा का नाविक

[३]

अबुल फ़वारिस ने उस दीर्घकायवाले से खाना पाकर अपनी भूख मिटा ली।

"अरे भाई, तुम यहाँ कितनी देर रहोगे? मेरे घर चलकर आराम तो करो।" ये शब्द कहते दीर्घकाय व्यक्ति अबुल फ़वारिस को साथ ले पहाड़ से उतरा। वहाँ पर एक द्वार था। उसे एक पत्थर से ढका गया था। दीर्घकाय ने उस पत्थर के छेद में हाथ डालकर पत्थर को हटाया और अबुल फ़वारिस को अन्दर भेजा। इसके बाद फिर उस द्वार को बन्दकर दीर्घकाय अपने काम पर चला गया।

अबुल फ़वारिस आगे बढ़कर एक बगीचे में पहुँचा। बगीचे में फलों के पेड़ झूम रहे थे। बगीचे के बीच एक मकान था। वह दीर्घकाय के निवास जैसा लगता था, उसके चारों तरफ़ कई झोंपड़ियाँ थीं।

अबुल एक झोंपड़ी में घुस पड़ा। उसमें दस आदमी बैठे थे। वे सब खूब मोटे-ताजे थे। वे अपने घुटनों पर सर रखे ऊकड़ू बैठे रो रहे थे। उन लोगों ने सर उठाकर अबुल को देखा और पूछा—"तुम कौन हो?"

अबुल फ़वारिस ने उन्हें बताया कि दीर्घकाय का वह एक मेहमान है।

"तुम भी इस राक्षस के हाथों में फँस गये हो? यह चरवाहे के वेश में घूमते आदमियों को पकड़कर खाता है।" उन लोगों ने समझाया।

उसी समय दीर्घकाय ने पत्थर को हटा कर अपनी भेड़ों को भीतर खदेड़ दिया। अन्दर आकर दर्वाजा बन्द करके अपने कमरे में चला गया।

सबके भोजन समाप्त होने के बाद दीर्घकाय ने उन आदमियों में से एक को

वाले को पकड़ने के लिए वह टटोलने लगा। अबुल उसकी पकड़ में आने से बड़ी चलाकी से बचता रहा। बार-बार दीर्घकाय के हाथ भेड़ों पर ही लगते थे। तब उसने द्वार का पत्थर हटा कर भेड़ों को बाहर खदेड़ दिया। अबुल ने एक भेड़ का चमड़ा ओढ़ कर बाहर भाग जाने का प्रयत्न किया। मगर बाहर जानेवाली भेड़ों की पीठों को टटोलने वाले दीर्घकाय ने अबुल को पहचान लिया, किंतु अबुल ने भेड़ का जो चमड़ा पहन रखा था, उसे राक्षस के हाथ में छोड़ समुद्र की ओर भाग गया।

मारा। उसको जला कर खाया। एक चमड़े की थैली से शराब लेकर पिया और बेफ़िक्र सो गया।

अबुल फ़वारिस ने मौक़ा पाकर उन लोगों से कहा–"हमें तो मरना निश्चित है। इसीलिए मैं इस राक्षस को मारने का प्रयत्न करूँगा। तुम लोग मेरी मदद करो।" लेकिन वे लोग हाथ-पैर हिलाने की हालत में न थे। इसलिए अबुल फ़वारिस ने दो जलती लकड़ियाँ लाकर दीर्घकाय की आँखों में घुसेड़ दीं।

उस पीड़ा से वह राक्षस कराह उठा। अपनी आँखों में आग की लकड़ियाँ घुसेड़ने

दीर्घकाय ने समुद्र के किनारे तक अबुल का पीछा किया, तब वह रुक गया। क्योंकि वह राक्षस तैरना नहीं जानता था। अबुल अपनी जान हथेली में लिये समुद्र में तैरते पहाड़ के दूसरी तरफ़ पहुँच गया। वहाँ पर अबुल को एक बूढ़ा दिखाई दिया। वह अबुल को सारा वृत्तांत सुनाकर उसे अपने घर ले गया।

अबुल को जब यह मालूम हुआ कि यह बूढ़ा भी मनुष्य को खाने वाला है, तब वह बड़ा दुखी हुआ। लेकिन अबुल ने बूढ़े की औरत की कृपा प्राप्त की और घर के कामों में वह उस औरत की मदद

देने लगा। बूढ़े ने अपनी भेड़ों को चराने का काम अबुल को सौंप दिया। इसलिए उस बूढ़े ने अबुल को अपने चरवाहे के पास दिया।

एक दिन अबुल जब पेड़ों के बीच घूम रहा था तब उसे मधुमक्खी का बड़ा छत्ता दिखाई पड़ा। उस दिन रात को अबुल ने चरवाहे की औरत से छत्ते की बात बतायी। उसने दूसरे दिन सवेरे छत्ता ले आने के लिए अबुल के साथ चरवाहे को भेजा।

बीच रास्ते में अबुल फ़वारिस अचानक चरवाहे पर कूद पड़ा और उसे पकड़ कर एक पेड़ से बांध दिया। इसके बाद दौड़ते हुए समुद्र के पास पहुँचा। समुद्र में कूद कर वह तैरने लगा।

कई घंटों तक तैरने के बाद अबुल को एक जहाज़ दिखाई पड़ा। जहाज़ के मल्लाहों ने उसे देखा और उसकी ओर जहाज बढ़ाया। अबुल ने जहाज़ पर सवार होने के बाद अपनी सारी कहानी आदि से अंत कर उन लोगों को सुनाई।

क़िस्मत की बात थी कि वह जहाज सीधे बस्रा नगर जा रहा था। एक महीने की यात्रा के बाद अबुल अपने घर के लोगों से मिला। तब तक उसका सर बिलकुल सफ़ेद हो चला था।
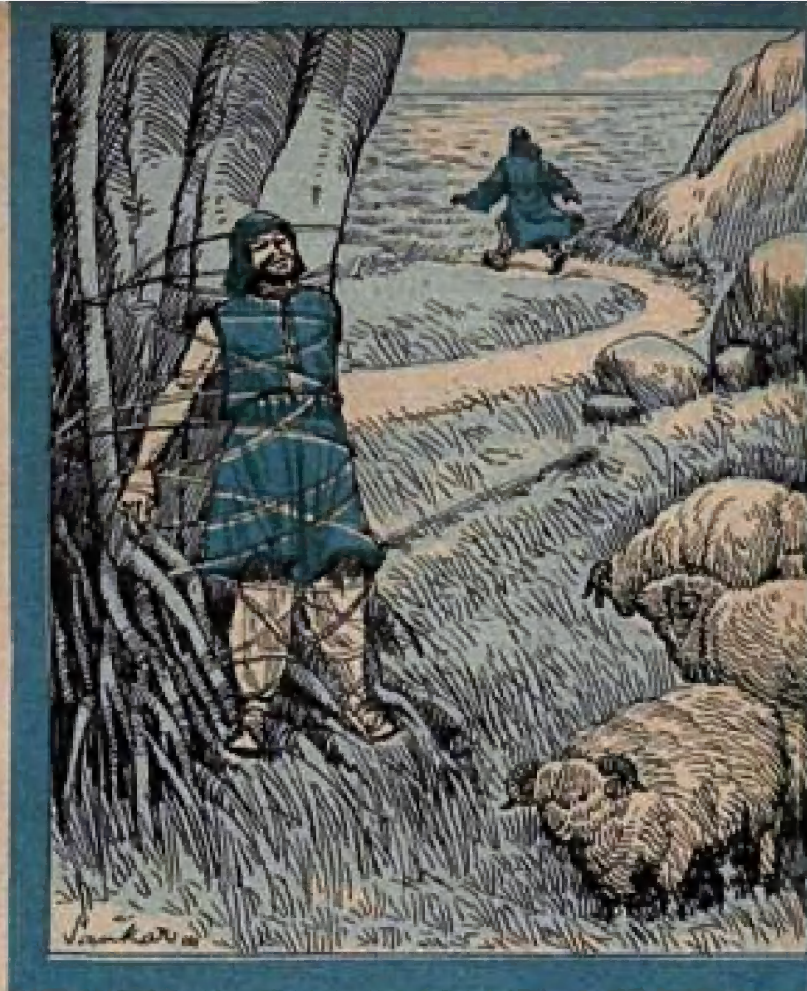
अबुल ने कुछ दिन घर पर आराम किया। एक दिन सवेरे वह समुद्र के किनारे टहल रहा था तब उसे वह बूढ़ा आदमी दिखाई पड़ा जिसने पहले पहल उसके जहाज को किराये पर लिया था।

बूढ़े ने अबुल फ़वारिस को नहीं पहचाना। उसने अबुल से पूछा—"देखो भाई, क्या तुम अपने जहाज को छे महीने के लिए किराये पर दे सकते हो?" अबुल को एक हज़ार दीनार चुका कर यह कहकर चला गया कि वह दूसरे दिन अबुल से मिलेगा।

दूसरे दिन अबुल फ़वारिस अपने जहाज में बूढ़े व्यापारी, उसके नौकर तथा बोरों को

ले रवाना हुआ। तीन महीनों की यात्रा के बाद वे लोग मोतीवाले टापू पहुँचे। जहाज़ का लंगर डाल कर वे लोग बोरों के साथ पहाड़ पर चढ़ गये।

पहले की भांति बूढ़े ने अबुल को गड्ढों में उतर कर मोती निकालने का आदेश दिया।

"इन गड्ढों में उतरने में मुझे डर लगता है।" अबुल ने जवाब दिया।

"अरे भाई, खतरा होता तो मैं तुम को उतरने को क्यों कहता? डर की कोई बात नहीं, उतरो।" बूढ़े ने कहा।

अबुल ने हठ किया।

लाचार होकर बूढ़ा खुद एक गड्ढे में उतरा। टोकरी में सीपियाँ भर कर ऊपर भेजते हुए बोला—"देखते हो न? कोई ख़तरा नहीं। मैं बूढ़ा हूँ। मेरी देह में ताक़त नहीं है। मुझे ऊपर खींच लो।"

"तुम तो गड्ढे में उतर ही गये। आज दिन-भर तुम्हीं सीपियाँ भरकर ऊपर भेजो। कल मैं उतरूँगा। जहाज़ भर सीपियाँ निकाल लाऊँगा।" अबुल ने बूढ़े से कहा।

बूढ़ा बड़ी देर तक सीपियाँ ऊपर भेजता रहा, तब बोला—"भाई, मैं थक गया हूँ, अब मुझसे न बनेगा।"

"अरे दुष्ट बूढ़े! अब तुम समझ गये हो न? एक दिन तुम मुझे इसी गड्ढे में छोड़ कर चले गये थे। मेरा नाम अबुल फ़वारिस है। तुम ने कई लोगों को इसी तरह मार डाला है। खुदा की मेहर्बानी से मैं बच गया। तुम्हारे ज़रिये जितने लोग मरे, उनकी याद करो।" ये शब्द कहकर अबुल ने उस गड्ढे पर बड़ी चट्टान ढक दी। नौकर के हाथ सीपियाँ मंगवा कर जहाज़ में डाल दी। घर लौटने पर नाविक की ज़िंदगी को तिलांजली दे आराम से दिन बिताने लगा। (समाप्त)

संसार के आश्चर्य:

१०७. प्राचीन क्रीड़ा-स्थल

अम्मान (जोर्डान) नगर में १५०० वर्ष पूर्व रोमनवासियों ने इस क्रीड़ा-स्थल का निर्माण किया। इसमें ४,००० प्रेक्षकों के बैठने की सुविधा थी। ग्लाडियेटर तथा अन्य अनेक खिलाड़ी यहाँ पर द्वन्द्व युद्ध किया करते थे। सिंह जैसे खूँख्वार जानवरों के साथ लड़ते थे। उस जमाने में अम्मान नगर का नाम फिलडल्फिया था। इस शिथिल क्रीड़ा-स्थल को शरणार्थी अपना आश्रय बनाते आये।